शिक्षा मनोविज्ञान

(Education Psychology)

मनुष्य प्रकृति की सर्वश्रेष्ठ कृति है अपनी बुद्धिमता एंव निर्णय क्षमता के कारण ही उसे यह स्थान प्राप्त हुआ है इस श्रेष्ठ स्थान को प्राप्त करने में प्रमुख स्थान शिक्षा ने ही निभाया है। शिक्षा व्यक्ति के व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास कर उसे एक पूर्ण मानव बनाती है। मानव को एक पूर्ण विकसित प्राणी बनाने के लिए कई नवीन विधियों एंव विषयों का सूत्रपात किया गया जिसमें शिक्षा मनोविज्ञान का महत्वपूर्ण स्थान है।

निःसंदेह किसी भी राष्ट्र या समाज के विकास का सर्वाधिक महत्वपूर्ण साधन मानव या व्यक्ति है, कोई भी राष्ट्र तब ही उन्नति कर सकता है, जब राष्ट्र के सभी नागरिकों का विकास करने के सर्वोत्तम अवसर मिलें तथा उनका लाभ उठाने में समर्थ हो। वस्तुतः मानव जाति के विकास का आधार शिक्षा प्रणाली ही है। और शिक्षा प्रणाली में शिक्षा मनोविज्ञान का विशेष स्थान प्राप्त है।

शिक्षा मनोविज्ञान जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है यह एक शब्द युग्म है जो शिक्षा तथा मनोविज्ञान दो शब्दों से मिलकर बना है। अतः शिक्षा मनोविज्ञान का अर्थ समझने के लिए हमें शिक्षा तथा मनोविज्ञान दोनों का अर्थ अलग-अलग समझना आवश्यक होगा। उसके उपरान्त ही शिक्षा मनोविज्ञान को हम स्पष्ट रूप से समझ सकते हैं।

शिक्षा मनोविज्ञान = शिक्षा + मनोविज्ञान

शिक्षा - शिक्षा शब्द संस्कृत भाषा के 'शिक्ष्' धातु से बना है, जिसका अर्थ है सीखना या सिखना, अतः शिक्षा शब्द का शाब्दिक अर्थ हुआ सीखने तथा सिखाने

Scanned with CamScanner

की क्रिया, शिक्षा शब्द को अंग्रेजी में Education कहते हैं Education शब्द अंग्रेजी भाषा के Educatum शब्द से मिलकर बना है। Educatum शब्द E + ducco से मिलकर बना है।

Educare - To Bring up

Educere - To lead out or to raise

* प्लेटो - "शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक विकास की प्रक्रिया शिक्षा है।"

अरस्तु - "स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का निर्माण करना शिक्षा है।"

महात्मा गाँधी - "शिक्षा से मेरा अभिप्राय बालक तथा मनुष्य के शरीर में मस्तिष्क तथा आत्मा के सर्वांगीण, सर्वोत्तम विकास से है।"

मनोविज्ञान - मनोविज्ञान एक ऐसा विज्ञान है जो प्राणियों के व्यवहार, मानसिक एवं दैहिक प्रक्रियाओं का अध्ययन करता है परन्तु वास्तव में इसका अर्थ इससे कुछ भिन्न है और साथ ही कुछ अधिक भी वर्तमान में मनोविज्ञान जिसमें मनुष्य एवं पशु पक्षियों के शारीरिक, मानसिक व्यवहारों के कारक, प्रेरक एवं नियन्त्रक तत्वों का अध्ययन किया जाता है।

शाब्दिक अर्थ - मनोविज्ञान शब्द का शाब्दिक अर्थ है मन का विज्ञान अर्थात् मनोविज्ञान अध्ययन की वह शाखा है जो मन का अध्ययन करती है।

मनोविज्ञान को अंग्रेजी में साइकोलॉजी (Psychology)

Scanned with CamScanner

कहते हैं। इसकी उत्पत्ति यूनानी भाषा के दो शब्द साइकी तथा लोगस से मिलकर हुई है, जिसमें साइकी का अर्थ है आत्मा (soul) तथा लोगस का अर्थ है अध्ययन (study) Psychology = Psyche + logos

अतः साइकोलॉजी का अर्थ हुआ "आत्मा का अध्ययन"। परन्तु वर्तमान समय में मनोविज्ञान के इन दोनो ही अर्थों को स्वीकार नहीं करते हैं। वास्तव में मनोविज्ञान का अध्ययन दर्शन शास्त्र की एक शाखा के रूप में शताब्दियों पूर्व हुआ था। परन्तु धीरे-2 यह दर्शन शास्त्र से अलग हो गया। इस प्रक्रिया में इसके अर्थ में अनेक बार परिवर्तन हुये जो निम्न प्रकार हैं-

"मनोविज्ञान आत्मा का विज्ञान है।"

① आत्मा के अध्ययन के रूप में - इस सिद्धान्त के प्रतिपादक युग में प्लेटो, अरस्तू और डेकार्टे आदि प्रसिद्ध रहे हैं क्योंकि साइकोलॉजी का अर्थ ही आत्मा के अध्ययन के रूप में लिया गया है। अतः इसका अर्थ आत्मा का विज्ञान या अध्ययन ही स्वीकार किया गया है। ये धारणा 16वीं शताब्दी तक प्रचलित रही परन्तु बहुत से विवाद उत्पन्न हुए।

"मनोविज्ञान मन का विज्ञान है।"

② मन के अध्ययन के रूप में - आत्मा के पश्चात् यह समझा जाने लगा कि मनोविज्ञान मन का विज्ञान है। इटली के प्रमुख दार्शनिक पोम्पोनाजी ने इसका जबरदस्त समर्थन किया, इनके साथ लॉक, काण्ट, ह्यूम आदि दार्शनिक भी आते रहे परन्तु उनके सम्बन्ध में भी वही विवादें सामने आईं जो आत्मा के सन्दर्भ में उपस्थित हुयीं।

③ चेतना के अध्ययन के रूप में - मानव एक चेतन प्राणी है चेतना का

Scanned with CamScanner

अर्थ होता है स्थिति का ज्ञान, स्थिति का पूर्ण ज्ञान या स्थिति के बारे में बहुत सीमा तक सचेत रहना। चेतन होने के कारण ही प्राणी वातावरण के प्रति प्रतिक्रिया करता है अमेरिका के विलियम जेम्स व जर्मनी के विलियम वुण्ड ने इसको चेतना का विज्ञान कहा है। वि० जेम्स ने ही सर्वप्रथम मनोविज्ञान को दर्शन से अलग किया परन्तु मनोविज्ञान चेतन का ही नहीं अर्द्धचेतन और अचेतन का भी अध्ययन करता है। इसमें हम स्वयं को तो अध्ययन कर सकते हैं परन्तु दूसरे व्यक्ति की उपरोक्त अवस्थाओं का अध्ययन नहीं कर सकते अतः 19 वीं शताब्दी की यह धारणा भी २० वीं शताब्दी तक आते-२ असफल होने लगी।

④ व्यवहार के अध्ययन के रूप में — २० वीं शताब्दी के प्रारम्भ में वॉटसन, वुडवर्थ, स्किनर आदि ने मनोविज्ञान को व्यवहार के एक निश्चित विज्ञान के रूप में स्वीकृत किया, व्यवहार से तात्पर्य मनुष्यों की उन अंत क्रियाओं से था जो वे उद्दीपकों से प्रति करते हैं। और जिनका निरीक्षण किया जा सकता है। आगे चलकर इसमें मानसिक व्यवहार, जीव व्यवहार, शारीरिक व्यवहार आदि सम्मिलित हो गये इन सभी के साथ ही मनोविज्ञान मनुष्य के वाह्य एवं आन्तरिक व्यवहार के रूप में प्रतिस्थित हुआ।

कॉलेसनिक — "मनोविज्ञान मानव व्यवहार का विज्ञान है"

उपरोक्त सभी विवेचन पर वुडवर्थ ने कहा है — "सर्वप्रथम मनोविज्ञान ने अपनी आत्मा का त्याग किया, फिर इसने अपने मन का त्याग किया और अब ये व्यवहार की विधि को स्वीकार करता है।"

Scanned with CamScanner

मनोविज्ञान की परिभाषाएं –

मैकडूगल – "मनोविज्ञान आचरण एवं व्यवहार का यथार्थ विज्ञान है।"

वुडवर्थ – "मनोविज्ञान वातावरण के संपर्क में होने वाले मानव व्यवहारों का विज्ञान है।"

वॉटसन – "मनोविज्ञान व्यवहार का निश्चित विज्ञान है।"

गैरिसन व अन्य – "मनोविज्ञान मानव एवं पशु व्यवहार का विज्ञान है।"

स्किनर – "मनोविज्ञान, व्यवहार और अनुभव का विज्ञान है।"

पिल्सबरी – "मनोविज्ञान की सबसे संतोष जनक परिभाषा "मानव व्यवहार के विज्ञान के रूप में की जा सकती है।"

मन – "आधुनिक मनोविज्ञान का सम्बन्ध व्यवहार की वैज्ञानिक खोज से है।"

Note – William James – "Principle of Psychology" को मनोविज्ञान की आधारशिला माना जाता है।

मनोविज्ञान की विशेषताएं –

Scanned with CamScanner

① मनोविज्ञान एक विधायक (Positive) विज्ञान है।
② मनोविज्ञान भौतिक एवं सामाजिक दोनों प्रकार के वातावरण का अध्ययन करता है। मनोविज्ञान मनुष्यों एवं पशुओं के व्यवहार का अध्ययन करता है। मनोविज्ञान के अन्तर्गत मानव प्रकृति का अध्ययन किया जाता है। इसमें मनुष्य एवं वातावरण के पारस्परिक अन्तः क्रिया का अध्ययन किया जाता है।

शिक्षा व मनोविज्ञान का सम्बन्ध - (Relation b/w Education & Psychology) - शिक्षा व मनोविज्ञान दोनों ही व्यक्ति को मनुष्य बनाना चाहते हैं। शिक्षा का प्रमुख कार्य है मनुष्य के व्यवहार में संशोधन और मनोविज्ञान का प्रमुख कार्य है मानव के व्यवहार का अध्ययन के अभाव में संशोधन नहीं किया जा सकता इसीलिए शिक्षा व मनोविज्ञान दोनों को एक दूसरे पर निर्भर रहना पड़ता है यदि हम चाहते हैं कि बालक का सर्वांगीण विकास हो तो शिक्षा के साथ मनोविज्ञान को जोड़ना ही होगा।

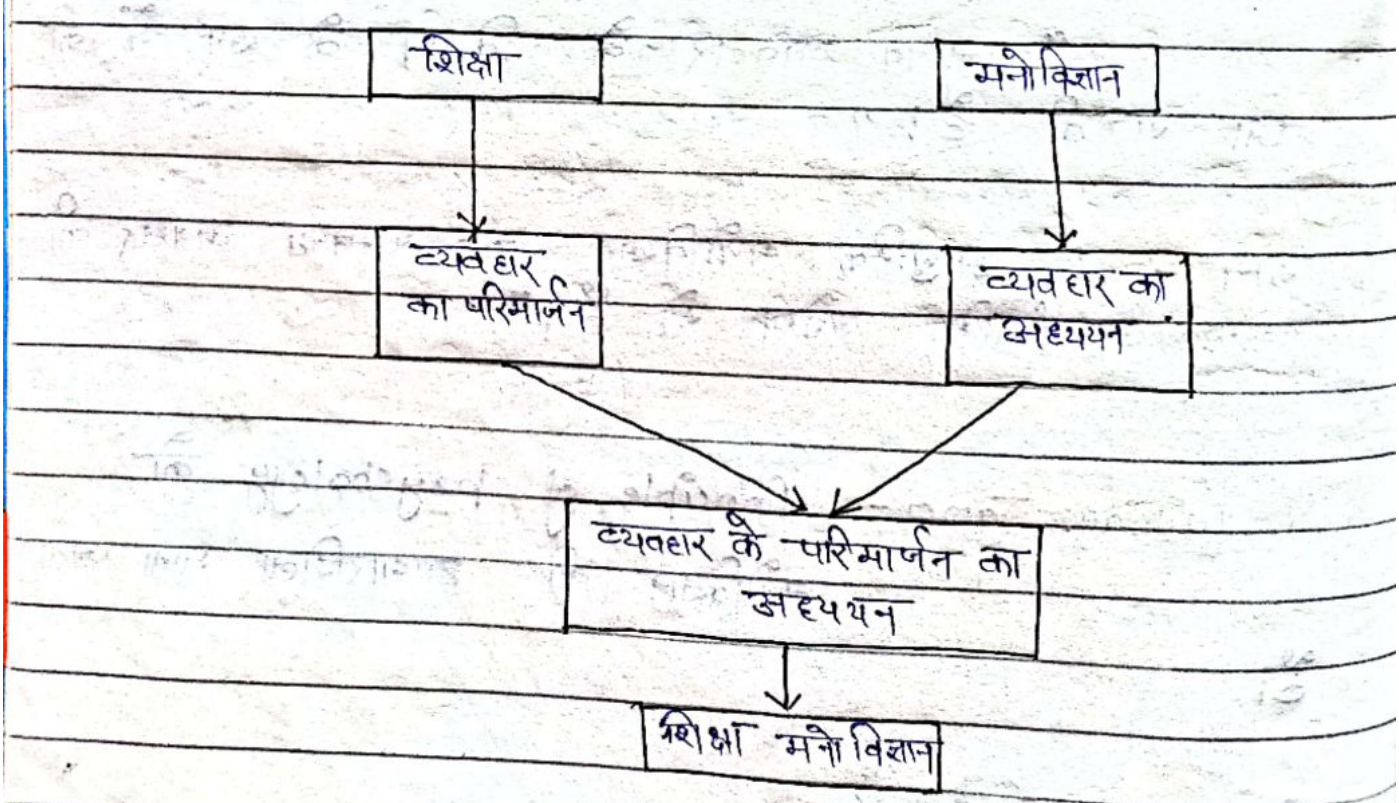

Scanned with CamScanner

शिक्षा के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने का श्रेय मनोविज्ञान को है।

① मनोविज्ञान एवं शिक्षा के उद्देश्य - आज की शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बालक का सर्वांगीण विकास कर उसे जीविकोपार्जन के लिए भी तैयार करना है इसके लिए आवश्यक है कि बालक की शिक्षा उन्हीं उद्देश्यों को ध्यान में रखकर दी जाये जो उसके भावी जीवन के लिए आवश्यक हैं।

② मनोविज्ञान व पाठ्यक्रम - पहले समय में पाठ्यक्रम के सब विषय सब बालकों के लिए अनिवार्य होते थे, इसके अतिरिक्त वह पूर्ण रूप से पुस्तकीय था। मनोविज्ञान ने पाठ्यक्रम के इन दोषों की कटु आलोचना की है। यह इस बात पर बल देता है कि पाठ्यक्रम का निर्माण बालकों की आयु, रुचियों एवं मानसिक योग्यताओं के अनुसार होना चाहिए।

③ मनोविज्ञान व पाठ्यपुस्तकें - पहले पाठ्य पुस्तकें संस्कृत तथा कठिन भाषा में हुआ करती थीं परन्तु अब मनोविज्ञान के पाठ्य पुस्तकों को बाल केन्द्रित शिक्षा के आधार पर रुचिकर, सरल, बाल के मनोविज्ञान का ध्यान रखकर बनाया है।

④ मनोविज्ञान व समयसारणी - पहले बच्चों को एक ही विषय का ज्ञान लम्बे समय तक दिया जाता था, परन्तु अब मनोविज्ञान द्वारा यह समझा जा सकता है कि बच्चों को किस विषय को समझने में परेशानी हो रही है। उस विषय को समय सारणी में ज्यादा समय दिया सकता है।

Scanned with CamScanner

(5) मनोविज्ञान व शिक्षण विधियाँ – प्राचीनकाल में बालक केवल मौन श्रोता होते थे जो गुरु की बात को कंठस्थ करते थे। मनोविज्ञान ने इस शिक्षण विधियों में आमूल परिवर्तन कर दिये हैं। इसने ऐसी विधि का आविष्कार किया जिससे बालक स्वयं सीख सकता है, इस उद्देश्य से बालक करके सीखना खेल द्वारा सीखना, चलचित्र आदि शिक्षण में शामिल किये गये।

(6) मनोविज्ञान व दृश्य-श्रव्य साधन – मनोविज्ञान के द्वारा यह ज्ञात किया जाता है कि अगर बालक व्याख्यान विधि द्वारा ज्ञान प्राप्त करने में सक्षम नहीं है तो उसे श्रव्य दृश्य साधनों के द्वारा ज्ञान दिया जाता है।

(7) मनोविज्ञान व अनुशासन –
(i) बाल्य अनुशासन (ii) किशोर अनुशासन (iii) आर्थिक अनुशासन

पहले समय में बालकों को अनुशासन में रखने की केवल एक विधि थी शारीरिक दण्ड। मनोविज्ञान ने दण्ड, रूढ़ कठोरता पर आधारित अनुशासन को सारहीन प्रमाणित किया, इसके आधार पर उसने प्रेम, प्रशंसा, सहानुभूति को अनुशासन के कई नये आधार बताये हैं। वह हमें अनुशासनहीनता के कारणों को खोजने तथा उन्हें दूर करने का परामर्श देती है।

(8) मनोविज्ञान व विद्यालय प्रशासन –

Scanned with CamScanner

(9) मनोविज्ञान व मूल्यांकन - बालकों द्वारा अर्जित किये जाने वाले ज्ञान का मूल्यांकन पहले से मौखिक और लिखित परीक्षा आयोजित की जाती थी। इन परीक्षाओं के दोषों को दूर करने के लिए मनोविज्ञान ने अनेक नई विधियों की खोज की है। जैसे - बुद्धि परीक्षा, व्यक्तित्व परीक्षा, वस्तुनिष्ठ परीक्षा आदि।

(10) मनोविज्ञान व अध्यापक -

शिक्षा - मनोविज्ञान - शिक्षा मनोविज्ञान वस्तुतः मनोविज्ञान की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण शाखा है। शिक्षा - मनोविज्ञान दो शब्दों के मेल से बना है।

शिक्षा मनोविज्ञान = शिक्षा + मनोविज्ञान

अतः शिक्षा मनोविज्ञान का शाब्दिक अर्थ शिक्षा से सम्बन्धित मनोविज्ञान से है।

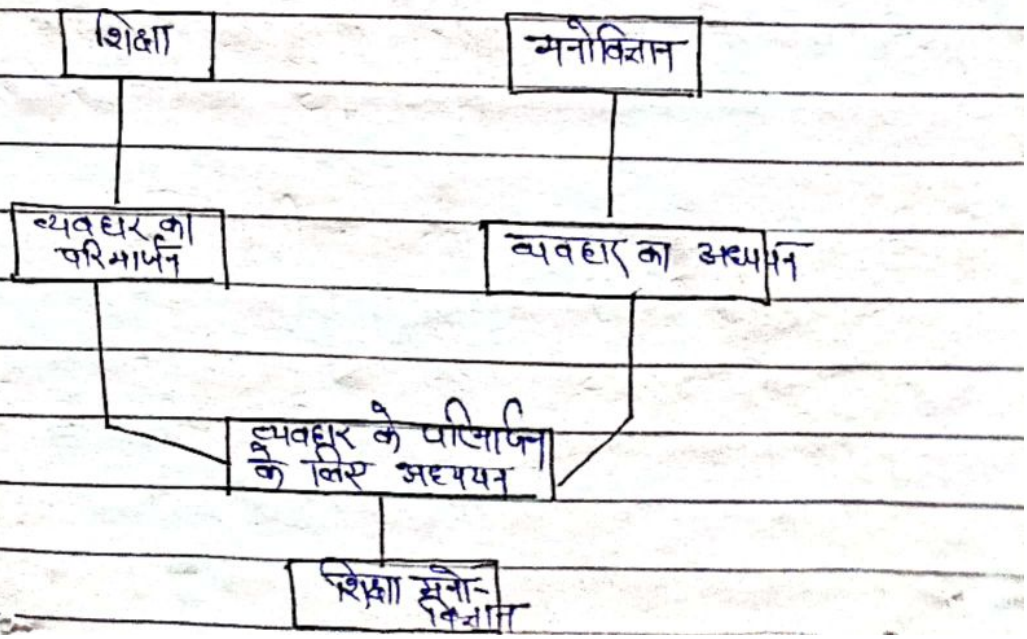

Scanned with CamScanner

मानव विकास - मानव विकास की अवस्थाएं मानव की वृद्धि व विकास सतत चलने वाली एक प्रक्रिया है, जो कि बालक को असहाय शिशु से आत्म-निर्भर प्रौढ़ बनाती है।

बुद्धि व विकास की यह प्रक्रिया जन्म से पूर्व ही माता के गर्भ में प्रारंभ हो जाती है व जीवनपर्यन्त चलती रहती है। शिक्षा के क्षेत्र में बुद्धि व विकास की प्रक्रिया का अत्यन्त महत्व है। क्योंकि आयु बढ़ने के

Scanned with CamScanner

साथ-साथ बालक की योग्यताओं व क्षमताओं में वृद्धि होने लगती है। इसलिए शैक्षिक कार्यक्रमों एवं पाठ्यक्रम का निर्धारण करते समय बालकों की आयु व उनके विकास की अवस्था का ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक है।

वृद्धि व विकास का अर्थ - वृद्धि व विकास को प्रायः समानार्थक अर्थ के रूप में प्रयोग किया जाता है, व साधारण अर्थों में दोनों को एक ही समझा जाता है क्योंकि निःसंदेह दोनों ही आगे बढ़ने की ओर संकेत करते हैं। वृद्धि व विकास के अर्थों को समझने के लिए हमें उपास्थिति अन्तों संरचना आवश्यक होगा। सामान्य रूप में वृद्धि का अर्थ को शिकीय वृद्धि एवं विकास का अर्थ कोशीकीय वृद्धि के फलस्वरूप शरीर के सभी अंगों में आगे परिवर्तनों से है। अतः स्पष्ट है कि विकास में वृद्धि का भाव निहित होता है। किंतु यह वृद्धि से अधिक व्यापक व एकीकृत होता है।

मानव अभिवृद्धि - मानव अभिवृद्धि से तात्पर्य मानव शरीर के अंगों का आकार, भार व कार्य शक्तियों में होने वाली परिपक्वता से होता है। इस परिवर्तन में उसके शरीर रचना के वाह्य तथा आन्तरिक अंग दोनों ही आजाते हैं।

वाह्य अंग - मनुष्य की यह अभिव्यक्ति एक निश्चित आयु (18-20 वर्ष) तक होती है वृद्धि पूर्ण होने पर बालक को परिपक्व व्यक्ति कहते हैं।

फेंक° अभिवृद्धि से तात्पर्य कोशिकाओं में होने वाली वृद्धि से होता है जैसे लंबाई व भार में

Scanned with CamScanner

वृद्धि होती है।

उपरोक्त समस्त विवेचनाओं से यह निश्चित-पूर्वक कहा जा सकता है कि मानव अभिवृद्धि से तात्पर्य उसके शरीर के वाह्य व आंतरिक अंगों के आकार, भार एवं कार्यक्षमता में होने वाली उस वृद्धि से होता है। जो गर्भावस्था से शुरू होकर परिपक्वता तक चलती रहती है।"

मानव विकास - मानव विकास से तात्पर्य व्यक्ति की अभिवृद्धि के साथ-साथ उसके शारीरिक एवं मानसिक व सामाजिक व्यवहारों में होने वाले परिवर्तनों से हैं। मानव की वृद्धि एक निश्चित समय पर होती जाती है परंतु उसका विकास निरंतर चलता रहता है। अतः कहा जा सकता है कि मानव विकास एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है जो व्यक्ति के गर्भावस्था से लेकर मृत्यु तक चलती है।

हरलॉक के अनुसार, "विकास अभिवृद्धि तक सीमित नही है। अपितु इसमें परिवर्द्धनों का वह प्रगतिशील क्रम निहित होता है जो परिपक्वता के लक्ष्य की ओर अग्रसर होता है। विकास के परिणामस्वरूप व्यक्ति में नवीन विशेषताएं व नवीन योग्यताएं प्रकट होती है।

उपरोक्त आधार पर कहा जा सकता है कि मानव विकास एक निरन्तर एवं प्रगतिशील प्रक्रिया है, जिसके द्वारा व्यक्ति में मात्रात्मक व गुणात्मक वृद्धि होती है। नयी-नयी योग्यताएं व विशेषताएं प्रकट होती है व उसके व्यवहार में दूरगामी परिवर्तन होता है।

* वृद्धि व विकास के सामान्य सिद्धान्त -
1. निरन्तरता का सिद्धांत
2. व्यक्ति विभिन्नता का सिद्धान्त

Scanned with CamScanner

3. परिमार्जता का सिद्धांत
4. निश्चित वृद्धि का सिद्धांत
5. समन्वय का सिद्धान्त
6. वंशानुक्रम व वातावरण का सिद्धांत
7. क्रमबद्धता का सिद्धांत
8. संक्षिप्तता का सिद्धांत
9. समान प्रतिमान का सिद्धांत

* वृद्धि व विकास में अंतर –

मानव अभिवृद्धि	मानव विकास
मानव अभिवृद्धि से तात्पर्य मनुष्य के आकार व भार मे होने वाली वृद्धि से है।	1. मानव विकास वृद्धि के साथ-साथ उसके ज्ञान, कौशल व व्यवहार में होने से होता है।
मानव अभिवृद्धि शारीरिक अंगो एवं कार्यक्षेत्र में होने वाली वृद्धि है।	2. मानव विकास मे शारीरिक व मानसिक क्रियाएं में परिवर्तन आशा, ज्ञान मे वृद्धि संवेगो का निर्माण। सामाजिक व चरित्रिक विकास से होता है।
3. मानव वृद्धि की एक सीमा होती है जिसे हम परिपक्वता कहते है।	3. मानव विकास का कोई सीमा नही होती है ये जीवन पर्यन्त होती रहती है।
4. मानव अभिवृद्धि मात्रात्मक होती है जिसका मापन यंत्रो द्वारा किया जा सकता है।	4. मानव विकास मात्रात्मक के साथ-साथ गुणात्मक भी होता है मात्रात्मक का माप नयंत्रों से किया जासकता है परन्तु गुणात्मक मापन के लिए विशेष विधियां एवं युक्तियों का प्रयोग किया जाता है।

Scanned with CamScanner

* मानव विकास की अवस्थाएं -

① शैशवावस्था ② बाल्यावस्था ③ किशोरावस्था
④ युवावस्था।

मानव विकास एक सतत प्रक्रिया है, जहां तक बात उसके शारीरिक विकास के बारे में की जाये तो वह एक अवस्था को प्राप्त करने के बाद रुक जाती है। परन्तु शारीरिक विकास के अतिरिक्त उससे सम्बन्धित अन्य विकास लगातार होते रहते हैं। यह विकास उसकी विभिन्न आयु पर, विभिन्न स्तरों पर होता है। इन आयु स्तरों को ही मानव विकास की अवस्थाएँ कहते हैं।

वैसे इन स्तरों को विभिन्न विद्वानों ने कई प्रकार से वर्गीकृत किया है, परन्तु सर्वाधिक मान्यता 'अरनेस्ट जोन्स' के वर्गीकरण को मिलती है। इस समय अधिकतर विद्वान मानव-विकास का अध्ययन इन चार अवस्थाओं के मध्य करते हैं -

① शैशवावस्था - 0-6 वर्ष
② बाल्यावस्था - 6-12 वर्ष
③ किशोरावस्था - 12-18 वर्ष
④ प्रौढ़ावस्था / युवावस्था - 18 से अन्त तक। (15-35) वर्ष

① शैशवावस्था - (Infancy) यह व्यक्ति के जन्म के बाद की प्रथम अवस्था है इसमें नवजात शिशु का विकास होता है इसे जीवन का सबसे महत्वपूर्ण काल कहा जाता है। शैशवावस्था शब्द शिशु से विकसित हुआ है जिसे अंग्रेजी भाषा में Infancy कहते हैं। Infancy लैटिन भाषा के दो शब्दों से मिलकर बना है In + fans, जिसमें In का अर्थ होता है नहीं और fans का अर्थ होता है बोलना। अर्थात - यह मानव विकास की वह अवस्था है

Scanned with CamScanner

जब कि मानव बोलने के अयोग्य होता है।
परन्तु बालक 3 वर्ष की अवस्था को प्राप्त करते -करते सार्थक भाषा का प्रयोग करने लग जाता है, अतः वास्तव में 0-3 वर्ष की अवस्था ही शैशवावस्था कहलाती है। और 3-6 वर्ष की अवस्था को पूर्वबाल्या-वस्था कहा जाता है। परन्तु जब मानव के विकास को चार भागों में बाँटा गया है तब इस आधार पर 0-6 वर्ष की अवस्था शैशवावस्था मानी जाती है। यह वह अवस्था है जो बालक के सम्पूर्ण भावी जीवन को प्रभावित करती है। इसीलिए इसी को जीवन का आधार माना जाता है। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार जीवन के प्रथम 5-6 वर्षों में शरीर व मस्तिष्क अत्यन्त ग्रहण -शील होते हैं। इस अवस्था में बालक जो कुछ भी सीखता या सीखाया जाता है उसका बालक के ऊपर अमिट प्रभाव पड़ता है।

① शारीरिक विकास- मानव के शारीरिक विकास की नींव शिशुकाल में ही रखी जाती है, इस आयु में बालक स्वयं उठना, बैठना, चलना सीखता है।
फ्रायड - "जीवन के पहले 4-5 वर्षों में बालक अपने भावी जीवन के लिए नींव रख लेता है।"

→ शारीरिक विकास की अन्य विशेषताएँ -
① शारीरिक विकास में तीव्रता।
② अनुपात में परिवर्तन।
③ दाँतों का विकास।
④ हड्डियों व मांसपेशियों का विकास।
⑤ नाड़ी संस्थान।
⑥ पाचन तन्त्र।

② मानसिक विकास- मानसिक विकास की प्रक्रिया भी बहुत तेजी से होती है। भाषा विकास,

Scanned with CamScanner

स्मरण शक्ति, कल्पना, तर्कशक्ति, रुचियाँ, आदतें तथा समस्या-समाधान आदि पक्ष उसके व्यवहार में शामिल होने लगते हैं।

→ अन्य विशेषताएँ :-

① भाषा का विकास।
② प्रश्न पूछना।
③ ज्ञानेन्द्रियों का विकास।
④ रुचियों का विकास।
⑤ कल्पना शक्ति का विकास।
⑥ संवेगात्मक विकास।

⑥ संवेगात्मक विकास - जन्म के समय शिशु केवल उत्तेजना का अनुभव करते हैं। एक माह का होते-होते वे सुख और दुःख का अनुभव करने लगते हैं। प्रथम वर्ष में उनमें प्रेम, क्रोध, भय आदि के संवेग विकसित हो जाते हैं। 1 वर्ष का शिशु यह चाहने लगता है कि उससे सम्बन्धित सभी लोग उससे प्यार करें। यदि कोई उसके मार्ग में बाधा डालता है तो वह क्रोध करने लगता है। 3 वर्ष की आयु तक उनमें लगभग सभी संवेगों का विकास हो जाता है। कुछ मनोवैज्ञानिक शिशु के रोने, चिल्लाने तथा हाथ, पैर फेंकने की क्रियाओं को संवेग पूर्ण क्रिया मानते हुए कहते हैं कि शिशु जन्म से ही संवेगात्मक व्यवहार करने लगता है।

⑦ सामाजिक विकास - शैशवावस्था के प्रारम्भिक वर्ष में शिशु में सामाजिक भावना का प्रभाव रहता है। वह अकेले ही खेलना चाहता है। प्रथम 2 वर्षों तक शिशुओं का व्यवहार मूल प्रवृत्ति से प्रेरित होता है, और वे स्वकेन्द्रित होते हैं। अपना ही सुख उनके लिए सभी कुछ होता है। 2 वर्ष

Scanned with CamScanner

का होते हैं वे अपने माता-पिता को पहचानने लगते हैं परन्तु इस अवस्था में समवयस्क बालक से ईर्ष्या करते हैं। तीन वर्ष की आयु पूरी करते हुए शिशु समवयस्क शिशु के प्रति प्रेम प्रदर्शित करने लगते हैं। उनके साथ खेलना पसन्द करते हैं। 6 वर्ष तक बच्चे समाज की भाषा सीख जाते हैं बड़ों का आदर करने लगते हैं छोटों से प्रेम प्रदर्शित करते हैं और समाज में अपना समायोजन करने लगते हैं।

* शैशवावस्था की मुख्य विशेषताएँ- शैशवावस्था के बच्चों में शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं संवेगात्मक के साथ-साथ नैतिक विकास की दृष्टि से निम्न विशेषताएँ पायी जाती हैं-

(i) शारीरिक विकास की तीव्र गति।
(ii) मानसिक क्षमताओं में तीव्रता।
(iii) अनुकरण एवं दोहराने की प्रवृत्ति।
(iv) भाषा विकास की तीव्र गति।
(v) जिज्ञासा प्रवृत्ति।
(vi) कल्पना करने की प्रवृत्ति।
(vii) सीखने की तेज प्रक्रिया
(viii) खेल की प्रवृत्ति।
(ix) संवेगात्मक विकास।
(x) सामाजिक विकास।
(xi) परनिर्भरता।
(xii) स्वप्रेम की भावना।
(xiii) मूल प्रवृत्तियों पर व्यवहार प्रदर्शन।
(xiv) काम प्रवृत्ति की स्थापना।
(xv) नैतिकता का अभाव।

* शैशवावस्था में शिक्षा- शिक्षा की दृष्टि से मानव जीवन में

Scanned with CamScanner

शैशवावस्था का अत्यन्त महत्व है। वैलेनटाइन ने तो इस अवस्था को सीखने का आदर्शकाल कहा है। अतः इस आधार पर शिक्षा से सम्बन्धित निम्न लिखित तथ्यों पर ध्यान देना आवश्यक है -

(i) उचित वातावरण।
(ii) पालन पोषण।
(iii) स्नेहपूर्ण व्यवहार।
(iv) जिज्ञासा की पूर्ति।
(v) सामाजिकता का अभाव।
(vi) मानसिक क्रियाओं के अवसर।
(vii) वार्तालाप के अवसर।
(viii) आत्मप्रदर्शन।
(ix) अच्छी आदतों का निर्माण।
(x) व्यक्तिगत विभेदों पर ध्यान।
(xi) करके सीखना। (मूल्यांकन)

③ बाल्यावस्था - (6वर्ष - 12वर्ष) बाल्यावस्था से तात्पर्य बच्चों की 6-12 वर्ष तक की अवस्था से होता है। यह जन्म के उपरान्त मानव विकास की दूसरी अवस्था है जो कि शैशवावस्था की समाप्ति पर प्रारम्भ होती है। बाल्यावस्था में प्रवेश करते समय बालक अपने वातावरण से काफी सीमा तक परिचित हो जाता है। वह व्यक्तिगत तथा सामाजिक व्यवहार सीख जाता है तथा उसकी औपचारिक शिक्षा का प्रारम्भ भी इसी अवस्था में प्रारम्भ होता है। शैक्षिक दृष्टि से बाल्यावस्था जीवन की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। दो भाग → (6-9) (9-12)
आकार (इसमें केवल शरीर में मजबूती आती है आकार में स्थायित्व)

* बाल्यावस्था में शारीरिक विकास - बाल्यावस्था के प्रथम चरण में (6-9 वर्ष)

Scanned with CamScanner

लम्बाई व भार दोनों में वृद्धि होती है इन तीन वर्षों में लड़कों की अपेक्षा बालिकाओं में लम्बाई व भार में अधिक वृद्धि होती है। इस काल में बच्चे शारीरिक शक्ति का संचय करते हैं। अतः यह संचय बाल्यावस्था के नाम से भी जाना जाता है।

(i) आकार व भार।
(ii) शारीरिक अनुपात।
(iii) मांसपेशियों में तालमेल।
(iv) दाँत।
(v) नाड़ी संस्थान।
(vi) ज्ञानेन्द्रिया।
(vii) पाचन संस्थान।

* मानसिक विकास - 6 वर्ष की आयु के पश्चात बच्चों में संवेदना, प्रत्यक्षीकरण, कल्पना, स्मृति आदि करने का विकास हो जाता है। साथ ही वह चिन्तन व तर्क करना सीख जाते हैं। पढ़ने-लिखने में रुचि लेने लगते हैं। समस्या समाधान की योग्यता विकसित हो जाती है जैसे -

① भाषा का विकास।
② अद्भुत प्रश्न।
③ विचार शक्ति का विकास।
④ ज्ञानेन्द्रियाँ तीव्र।
⑤ कल्पना के रंग।
⑥ धारणाएँ।
⑦ रुचियों का विकास।
*⑧ संवेगात्मक विकास।

* संवेगात्मक विकास - बाल्यावस्था में मूल रूप से शैशवावस्था में विकसित संवेगों की

Scanned with CamScanner

अभिव्यक्ति होती है। बस उनकी अभिव्यक्ति में अन्तर होता है। शैशवावस्था में बच्चे अपने साथियों के प्रति प्रेम की अभिव्यक्ति मुस्कराकर, स्पर्श कर या बोलकर करते हैं। परन्तु बाल्यावस्था में उनके साथ रहकर सुखदुःख में शामिल होने या उनकी सहायता कर के करते हैं। इसके बाद बालक परिस्थितियों के अनुसार अपने संवेगो को नियन्त्रित करना अथवा प्रकट करना सीख जाते हैं।

① भय।
② चिन्ता।
③ क्रोध।
④ ईर्ष्या।
⑤ खुशी।
⑥ स्नेह परिवर्तन।
⑦ उत्सुकता।
⑧ सामाजिक विकास।

* सामाजिक विकास - इस समय में सामूहिकता की मूल अधिक क्रियाशील हो जाती है वे अपने साथियों के साथ रहना पसन्द करते हैं। सामाजिक समारोह में शामिल होना चाहते हैं। समाज के अनुसार अपने व्यवहार में परिवर्तन करते हैं। बालक सकारात्मक व्यवहार के साथ नकारात्मक व्यवहार करने लगते हैं। उनमें परस्पर प्रतिस्पर्धा की भावना आ जाती है, वे किसी भी प्रकार से एक दूसरे से आगे निकलना चाहते हैं

① विद्यालयी सामंजस्य।
② समूह निर्माण।
③ नकारात्मक प्रवृत्ति।
④ चरित्र निर्माण।

Scanned with CamScanner

* बाल्यावस्था की मुख्य विशेषताएँ -

① शारीरिक विकास में स्थायित्व।
② मानसिक योग्यताओं में विकास।
③ रुचियों में परिवर्तन।
④ (बहुमुखी) व्यक्तित्व।
⑤ वास्तविक जगत में रुचि।
⑥ आत्म निर्भरता।
⑦ सृजनात्मकता।
⑧ संवेगों पर नियन्त्रण।
⑨ सामाजिक विकास।
⑩ नैतिक विकास।
⑪ नई चीजों को सीखना।

* बाल्यावस्था में शिक्षण - शैशवावस्था में तो बालक बहुत तेजी से सीखते हैं परन्तु उसका क्षेत्र सीमित होता है बाल्यावस्था में बालक सीखते तो कम हैं परन्तु उसका क्षेत्र विस्तृत होता है इसी अवस्था में वह मूर्त में प्राप्त ज्ञान को स्थायी बनाने का विकास/प्रयास करता है

① शारीरिक विकास में सहायता।
② मानसिक योग्यता में विकास।
③ जीवन से सम्बन्धित ज्ञान।
④ संवेगो का विकास।
⑤ सामाजिक विकास।
⑥ नैतिक विकास।
⑦ समाज व राष्ट्रप्रेम की भावना।
⑧ प्रोजेक्ट कार्य को बढ़ावा।
⑨ भाषा का विकास।

Scanned with CamScanner

(10) रचनात्मक कार्य।
(11) प्रेम व सहानुभूति पर आधारित शिक्षा।
(12) क्रिया व खेल द्वारा शिक्षा।
(13) पाठ्य सहगामी क्रियाएं।
(14) शिक्षण विधियों में परिवर्तन।

विलियम ब्लेयर, जोन्स व सिम्पसन के अनुसार - "बाल्यावस्था वह अवस्था है जिसमें व्यक्ति के आधारभूत दृष्टिकोण और मूल्यों, आदर्शों का बड़ी सीमा तक निर्माण हो जाता है।"

(मूल्यांकन)

(3) किशोरावस्था - यह मानव विकास की तीसरी अवस्था है जो बाल्यकाल के बाद और प्रौढ़ावस्था के पूर्व की व्यवस्था है। व्यक्तिगत भेदों, जलवायु के कारण इसकी अवधि में कुछ अन्तर पाया जाता है परन्तु फिर भी प्रायः 12 से 18 वर्ष की आयु के बीच की अवधि को किशोरावस्था कहा जाता है।

बाल्यावस्था तथा प्रौढ़ावस्था के बीच का संधि-काल होने के कारण इसे जीवन का सबसे कठिन एवं महत्वपूर्ण काल कहा जाता है। इस अवधि में बालक दोनों ही अवस्थाओं के बीच में घिरा रहता है। उसके विचारों को न तो बालक के रूप में समझा जाता है और न ही एक वयस्क के रूप में स्वीकृति मिलती है।

Adolescence किशोरावस्था को अंग्रेजी में Adolescence जो कि लैटिन भाषा के Adolescere शब्द से बना है जिसका अर्थ होता है 'To grow to maturity' (परिपक्वता की ओर बढ़ना)। अतः किशोरावस्था, वह

अवस्था है जिसमें बालक परिपक्वता की ओर अग्रसर होता है तथा जिसकी समाप्ति पर पूर्ण परिपक्व व्यक्ति बन जाता है।

ई० एस० पैट्रिक के अनुसार - "इस बात पर कोई मतभेद नहीं हो सकता कि किशोरावस्था जीवन का सबसे कठिन काल कार्य है।"

हॉल, जोन्स व सिम्पसन - "किशोरावस्था प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में वह काल है जो बाल्यावस्था के अन्त में प्रारम्भ होता है और प्रौढ़ावस्था के आरम्भ में समाप्त होता है।"

मेरी नजर में किशोरावस्था जीवन का सबसे कठिन एवं महत्वपूर्ण समय इसलिये है कि - अपने विचार

*किशोरावस्था में शारीरिक विकास - इस अवस्था में किशोरों की लंबाई व भार दोनों में वृद्धि होती है। साथ ही मांसपेशीयों में वृद्धि होती व उनमें दृढ़ता आती है। 12-14 वर्ष की आयु के बीच लड़कों की अपेक्षा लड़कियों में शारीरिक विकास अधिक तेजी से होता है। समान उम्र की होने पर लड़कियाँ लड़कों से बड़ी दिखाई देती हैं। इस समय लड़के व लड़कियाँ दोनों की हड्डियाँ पूर्ण मजबूत हो जाती हैं। उनके सभी बाह्य एवं आन्तरिक अंग पूर्ण रूप से विकासित हो जाते हैं। इसी अवस्था में गोनार्ड ग्रन्थियों के क्रियाशील होने के कारण प्रजनन अंगों का विकास होकर उनमें काम की मूल प्रवृत्ति जाग्रत होती है। इस समय वे सर्वप्रथम अपने शारीरिक अंगों के प्रति आकर्षित होते हैं व सुडौल एवं सुन्दर बनाने का प्रयत्न करते हैं।

बिंग एवं हाइन, "किशोरावस्था की विशेषताओं को सर्वोत्तम प्रकार से व्यक्त करने वाला एक शब्द क्षण है -

Scanned with CamScanner

परिवर्तन। परिवर्तन शारीरिक, सामाजिक व मनोवैज्ञानिक होता है।

*मानासिक विकास- इस अवस्था तक आते-आते किशोर-किशोरियों की बुद्धि पूर्ण विकसित हो जाती है। स्मरण व ध्यान केंद्रित करने की क्षमता बढ़ जाती है। उनमें स्थायित्व आने लगता है। कल्पना, चिन्तन, विश्लेषण आदि तत्व उनके द्वारा लिए गये निर्णय समाहित होने लगते हैं। वे किसी भी प्रकार की समस्या व उसका समाधान करने में सक्षम हो जाते हैं। इसी अवस्था में अपने स्वास्थ्य, वेष-भूषा व जीवन मूल्यों में अपने चरम को प्राप्तिकता देते हैं।

* संवेगात्मक विकास - संवेदनशीलता अपने चरम स्तर पर होती है। उनमें प्रेम, भय, चिन्ता, क्रोध ईर्ष्या आदि के साथ-साथ आत्म सम्मान की प्रबल भावना होती है। समूह में अपनी स्थिति को लेकर बालक बहुत सचेत रहते हैं। इस उम्र के किशोर अपने शारीरिक स्वास्थ्य के लिए विभिन्न प्रकार की क्रियाएं करते हैं एवं किशोरियां अपने शारीरिक सौन्दर्य का प्रदर्शन करती हैं। इसके साथ-२ तीव्र प्रकार की अविष्य की चिन्ता प्रबल रूप में रहती है।

→ जीवनसाथी
→ व्यवसाय
→ समाज में स्थान

इन्हीं चिंताओं के कारण उनका मानसिक सन्तुलन आशा व निराशा के बीच घूमता रहता है। इसलिए इस अवस्था को खिंचाव या तनाव की अवस्था भी कहते हैं।

Scanned with CamScanner

*सामाजिक विकास - इस अवस्था में बालक समाज के सामाजिक, धार्मिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में रुचि लेने लगते हैं। इससे उनमें सामाजिक परिपक्वता आती है। वे अच्छा या बुरा समझने लगते हैं। इस उम्र में वे घर से ज्यादा अपने मित्रों को स्थान देते हैं, मित्र बनाने की प्रवृत्ति का विकास होता है। एक या दो स्थाई मित्र भी बनते हैं। जिनसे वे अपने मन की समस्त बातें करते हैं। विषमलिंगीय आकर्षण बनने के कारण वे उनसे बात करने एवं उनसे मिलने की आनन्द का अनुभव करते हैं। इसी समय उनका नैतिक विकास होना प्रारंभ होता है। आत्म-सम्मान, समाज व राष्ट्र सेवा एवं त्याग की भावना का भी विकास होता है। दूसरों को सुखी देखने के लिए वे अपने सुख का भी त्याग कर देते हैं। लोकप्रिय नेता, अभिनेता, कलाकार एवं खिलाड़ियों के प्रति उनमें आकर्षण बढ़ता है और वे अपनी रुचि के अनुसार उनके जैसा ही दिखना चाहने लगते हैं। विविध क्षेत्रों में अपने-अपने गुटों का निर्माण कर वे विभिन्न प्रकार पारस्परिक प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देने लगते हैं।

*किशोरावस्था की मुख्य विशेषताएँ -

1. तीव्र शारीरिक परिवर्तन
2. हड्डियों व मांस पेशियों का तेजी से विकास
3. शारीरिक अनुपात में परिवर्तन
4. आवाज में परिवर्तन
5. बुद्धि एवं मानसिक शक्तियों का विकास
6. समायोजन का अभाव
7. घनिष्ठ मित्रता
8. इच्छाओं व कल्पनाओं का बाहुल्य

Scanned with CamScanner

9. रूचियों में स्थायित्व
10. आत्म-सम्मान की भावना
11. काम शक्ति की परिपक्वता
12. समूह को महत्व
13. स्वतंत्रता व विद्रोह की भावना
14. अच्छी बुरी आदतों का विकास
15. भविष्य की चिन्ता
16. समाज सेवा की भावना
17. ईश्वर व धर्म में विश्वास
18. संवेगात्मक अस्पष्टता
19. उच्च कोटि की संवेदनशीलता
20. वीर-पूजा की भावना
21. स्वाभिमान की भावना
22. अपराध-प्रवृत्ति की भावना
23. उदासीनता व उद्दण्डता
24. आत्मवृद्धि की भावना या स्वप्रेम की भावना
25. सामाजिक रूचियों का विकास
26. जीवन दर्शन का निर्माण
27. व्यापक वफादारी की भावना
28. गुप्त भाषा का निर्माण

*किशोरावस्था व शिक्षा - स्टेनले हॉल के अनुसार "किशोरावस्था बड़े संघर्ष, तनाव, तूफान व विरोध की अवस्था है।"

किशोरावस्था जीवन का सर्वाधिक कठिन महत्वपूर्ण व नाजुक समय होता है। इस अवस्था में लड़के, लड़कियों के शरीर एवं मन मास्तिष्क के बड़े क्रांतिकारी परिवर्तन होते हैं। शारीरिक परिवर्तनों में यौन शक्ति के उदय व मानसिक परिवर्तनों में संवेग की तीव्रता उनके व्यवहार को झकझोर देती है, यदि

Scanned with CamScanner

इस अवस्था मे उनको उचित मार्गदर्शन प्रदान किया जाये, तो किशोरों के द्वारा वांछित दिशा में प्रगति करने की संभावना बढ़ जाती है। ये उनके बनने या बिगड़ने का समय होता है। यदि इस समय उनके लिए उचित शिक्षा की व्यवस्था की जाती है। तो वे बन जाते हैं अन्यथा बिगड़ जाते हैं। किशोरो के भावी जीवन निर्माण की दृष्टि से माता-पिता अध्यापक तथा समाज का यह कर्तव्य हो जाता है कि इस महत्वपूर्ण अवस्था में उनके लिए उपयुक्त एवं सुनियोजित शिक्षा की व्यवस्था हैं।

* किशोरावस्था व शिक्षा के उद्देश्य - शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक और सामाजिक विकास की दृष्टि से इस अवस्था में शिक्षा के निम्न उद्देश्य होने चाहिए -

1. शारीरिक विकास में सहायता करना।
2. मानसिक विकास में सहायता करना।
3. उचित संवेगो का निर्माण करना।
4. उपयुक्त सामाजिक विकास करना।
5. उचित मूल्यों व नैतिक विकास का निर्माण।
6. क्षमता व योग्यतानुसार व्यवसायिक शिक्षा देना।
7. समाज सेवा व राष्ट्रीय भक्ति के भाव को विकासित करना।

* किशोरावस्था व शिक्षा की पाठ्यचर्या -

1. शारीरिक विकास - शरीर विज्ञान का ज्ञान, खेल-कूद, व्यायाम व समन्वित परिचर्या।
2. मानसिक विकास - भाषा, साहित्य, सामाजिक विज्ञान, विज्ञान, गणित, भ्रमण एवं स्वयं करके सीखना।

Scanned with CamScanner

3. उचित संवेग निर्माण - साहित्य, कला, संगीत साहित्यिक क्रियाएं, सामाजिक क्रियाएं एवं समाज सेवा।
4. सामाजिक विकास - सामूहिक शिक्षण, सामूहिक कार्य, सांस्कृतिक क्रियाएं, स्काउटिंग, एन. एस. एस. व भ्रमण।
5. मूल्य व नैतिक शिक्षा - भाषा, साहित्य, इतिहास, धार्मिक व नैतिक शिक्षा।
6. व्यवसायिक शिक्षा - विद्यार्थियों की रुचियों के अनुसार विभिन्न प्रकार की शिक्षा जैसे - फोटोग्राफी, पेंटिंग, वाणिज्य कम्प्यूटर आदि।
7. समाज सेवा व राष्ट्र भक्ति - सम्बंधित साहित्य, इतिहास स्वतन्त्रता आंदोलन सामग्री, महापुरुषों के जीवन दर्शन, समाज सेवा कार्य, राष्ट्रीय पर्वों का आयोजन एवं संबंधित अं नाटक इत्यादि।

किशोरावस्था व

* अन्य शैक्षिक गतिविधियाँ -

① शारीरिक विकास के लिए शिक्षा।
② व्यक्तिगत - विभिन्नता के आधार पर शिक्षा।
③ यौन शिक्षा
④ उपर्युक्त शिक्षण विधियों का प्रयोग।
⑤ व्यस्कों की तरह व्यवहार।
⑥ उचित वेश-भूषा।
⑦ उत्तरदायित्व के कार्य।
⑧ माता-पिता का सहयोग।
⑨ निर्देशन केन्द्र।

* किशोरावस्था की आवश्यकताएं -

Scanned with CamScanner

① निर्भरता से स्वतन्त्रता की आवश्यकता।
② विरोधी लिंग से मिलन की आवश्यकता।
③ जीवन दर्शन की आवश्यकता।
④ आत्म-पहचान की आवश्यकता।
⑤ अच्छा भोजन की आवश्यकता।
⑥ नये अनुभवों की आवश्यकता।

* किशोरावस्था की समस्याएं =

① आवश्यकताओं एवं इच्छापूर्ति की समस्या इच्छा।
② नियन्त्रण से छुटकारे की समस्या
③ समायोजन की समस्या।
④ यौन समस्या।
⑤ आत्मसम्मान एवं स्तर की समस्या।
⑥ भविष्य की चिन्ता की समस्या।
⑦ नैतिक विकास की समस्या।

वी॰ एन॰ झा - " किशोरावस्था में संवेगात्मक विकास इतना विचित्र होता है कि किशोर एक ही परिस्थिति में विभिन्न अवसरों पर विभिन्न प्रकार का व्यवहार करता है जो परिस्थिति एक अवसर पर उसे उल्लास से भर देती है वही परिस्थिति उसे दूसरे अवसर पर खिन्न कर देती है।"

Scanned with CamScanner

⊛ अधिगम – सीखना एक निरन्तर चलने वाली सार्वभौमिक प्रक्रिया है। व्यक्ति जन्म से ही सीखना प्रारम्भ कर देता है तथा मृत्यु होने तक कुछ न कुछ सीखता रहता है। हालांकि हालांकि परिस्थिति के अनुसार सीखने की गति घटती या बढ़ती रहती है। सीखने के लिए कोई स्थान विशेष निश्चित नहीं होता है। व्यक्ति कहीं भी कुछ भी किसी से भी सीख सकता है। शिक्षण के क्षेत्र में सीखना ही अधिगम कहलाता है। ध्यान से देखा जाय तो अधिगम शिक्षा प्रक्रिया का एक आवश्यक तथा महत्वपूर्ण अंग होता है। शिक्षा मनोविज्ञान में अधिगम को सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। मनोवैज्ञानिकों की दृष्टि में सीखने की प्रक्रिया का तब तक कोई अर्थ नहीं जब तक कि मनुष्य के व्यवहार में कोई परिवर्तन न हो।

मनुष्य के कुछ कार्य जैसे सांस लेना, पलक झपकाना, देखना, सुनना, हाथ-पैर हिलाना, उठना, बैठना, चलना, आभास करना, प्राणों की रक्षा के लिए भागना, भोजन की तलाश करना आदि मूल प्रवृत्ति के व्यवहार हैं। इस प्रकार के कार्यों को करने के लिए मनुष्य कहीं सीखने नहीं जाता। अतः यह कार्य अनअर्जित कार्य कहलाते हैं। परन्तु अन्य कार्य जैसे- लिखना, भाषा सीखना, पेड़ पर चढ़ना, तैरना, मोटर साइकिल चलाना, घरेलू कार्य करना आदि। अर्जित कार्य हैं। और इन कार्यों को ग्रहण करने की प्रक्रिया सीखना या 'अधिगम' कहलाती है।

* परिभाषाएं –

① वुडवर्थ – "नवीन ज्ञान और नवीन प्रतिक्रियाओं को प्राप्त करने की प्रक्रिया सीखने की प्रक्रिया है।"

Scanned with CamScanner

(attitude)

② क्रो एण्ड क्रो - "सीखना आदतों, ज्ञान और अभिवृत्तियों का अर्जन है।"

③ गेट्स व अन्य - "अनुभव तथा प्रशिक्षण द्वारा व्यवहार का सुधार अधिगम है।"

④ स्किनर - "अधिगम व्यवहार में प्रगतिशील अनुकूलन की एक प्रक्रिया है।"

⑤ गिलफोर्ड - "व्यवहार के कारण व्यवहार में आया कोई भी परिवर्तन अधिगम है।"

⑥ ब्लेयर, जोन्स व सिम्पसन - "व्यवहार में कोई ऐसा परिवर्तन जो अनुभव के परिणाम स्वरूप होता है और जो व्यक्तियों को आगे आने वाली परिस्थितियों का विशेष्टा के साथ सामना करने में सहायक होता है, उसे सीखना कहते हैं।"

उपरोक्त समस्त परिभाषाओं के आधार पर निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि सीखने का अर्थ है - अनुभव, शिक्षण, प्रशिक्षण अथवा अध्ययन आदि। किसी भी विधि से नये-नये तथ्यों का ज्ञान प्राप्त करना और नई-नई क्रियाओं का ज्ञान प्राप्त करना तथा साथ ही इन्हें बहुत दिनों तक धारण करना और आवश्यकता पड़ने पर इनका प्रयोग करना और इस प्रकार अपने व्यवहार को सही दिशा देना।

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर कुछ तथ्यों की ओर संकेत किया जा सकता है -

Scanned with CamScanner

(i) अधिगम का अर्थ व्यवहार परिवर्तन है।
(ii) अधिगम व्यवहार का संशोधन है।
(iii) अधिगम नवीन प्रक्रिया की वृद्धि है।

* अधिगम निहित तत्व -

① अधिगम कोई परिणाम न होकर एक प्रक्रिया है।
② अधिगम की प्रक्रिया सदैव उद्देश्य पूर्ण होती है। जो व्यक्ति को समायोजन तथा अनुकूलन के लिए तैयार करती है।
③ अधिगम का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक होता है क्योंकि इसमें मानव व्यवहार के सभी क्षेत्र जैसे- ज्ञानात्मक, भावात्मक व मनोचालक सम्मिलित रहते हैं।
④ अधिगम व्यवहार में परिवर्तन की प्रक्रिया है परन्तु बीमारी बिमारी, थकान, संवेगात्मक स्थिति, मादक द्रव्यों का सेवन आदि कारण व्यवहार में आये परिवर्तन को अधिगम नहीं कहा जा सकता।
⑤ अधिगम प्रक्रिया की अभिव्यक्ति व्यक्ति के द्वारा अधिगम के दौरान की जाने वाली विभिन्न प्रकार की क्रियाओं द्वारा होती है।
⑥ अधिगम सदैव सकारात्मक नहीं होता कभी-2 यह नकारात्मक भी हो सकता है।
⑦ अधिगम सदैव नवीन नहीं होता बल्कि यह पूर्व व्यवहार का संशोधन भी होता है।
⑧ अधिगम प्रक्रिया सार्वभौमिक व सतत होती है अर्थात सभी जीव धारी सीखते हैं तथा सीखना किसी आयु लिंग, भेद, जाति, प्रजाति विशेष तक सीमित नहीं होता।
⑨ अधिगम लगभग स्थायी प्रवृत्ति का व्यवहार संशोधन होता है।
⑩ अधिगम अभ्यास, प्रशिक्षण तथा अनुभव पर आधारित

Scanned with CamScanner

होता है।

⑪ अधिगम में मूल प्रवृत्ति तथा प्रतिद्वेद क्रिया जैसे- जन्मजात व्यवहार प्रवृत्तियों के कारण आये परिवर्तन सम्मिलित नहीं होते।

* अधिगम की विशेषताएं- अधिगम प्रक्रिया को अच्छी तरह से समझने के लिए मनोवैज्ञानिक याकम व सिम्पसन ने अधिगम की निम्न विशेषताएं बतई हैं -

① अधिगम विकास है।
② अधिगम अनुकूलन है।
③ अधिगम अनुभवों (अनुभवों) का संगठन है।
④ अधिगम उद्देश्य पूर्ण होता है।
⑤ अधिगम विवेक पूर्ण होता है।
⑥ अधिगम सृजनशील होता है।
⑦ अधिगम क्रियाशील होता है।
⑧ अधिगम व्यक्तिगत व सामाजिक दोनों होते हैं।

सिम्पसन के अनुसार "सीखना सामाजिक है क्योंकि किसी भी प्रकार के सामाजिक वातावरण के अभाव में व्यक्ति का सीखना असम्भव है।"

⑨ सीखना वातावरण के परिणाम स्वरूप होता है।
⑩ अधिगम व्यक्ति के आचरण को प्रभावित करता है।
⑪ अधिगम खोज करना है।

मर्सेल के अनुसार "सीखना उस बात को खोजने व जानने का कार्य है जिसे एक व्यक्ति खोजना व जानना चाहता है।"

→ * मैकडाव के अनुसार -

Scanned with CamScanner

① अधिगम व्यवहार में सतत परिवर्तन है जो जीवनपर्यंत चलता रहता है।
② अधिगम सर्वांगीण है अतः मानव जीवन के सभी पक्षों में अधिगम की प्रक्रिया चलती रहती है।
③ अधिगम में व्यक्ति सम्पूर्ण रूप से (शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक आदि) सम्मिलित रहता है।
④ अधिगम अधिकांशतः व्यवहार के संगठन में परिवर्तन होता है।
⑤ अधिगम विकासात्मक है।
⑥ अधिगम प्रोत्साहन की प्रक्रिया है।
⑦ अधिगम उद्देश्य परक होता है।
⑧ अधिगम व रुचि परस्पर सम्बन्धित होती है।
⑨ अधिगम तैयारी व अभिप्रेरणा पर निर्भर करता है।

* अधिगम के प्रकार - अधिगम को मुख्यतः तीन भागों में बाँटा जा सकता है -
(i) शाब्दिक अधिगम।
(ii) गत्यात्मक अधिगम।
(iii) समस्या समाधान अधिगम।

* अधिगम को प्रभावित करने वाले कारक -

① पूर्व अधिगम - पहले क्या सीखा जा चुका है? यह इससे सम्बन्धित होता है क्योंकि किसी भी प्रकार के नवीन अधिगम की प्रक्रिया शून्य से प्रारम्भ नहीं होती बल्कि वह बालक द्वारा पूर्व अर्जित ज्ञान से प्रारम्भ होती है। बालक के ज्ञान की आधारशिला जिसकी सुदृढ़ अथवा व्यापक होती है उसकी ज्ञान प्राप्ति की प्रतिक्रिया उतनी ही सुचारू रूप से चलती है अतः शिक्षण के दौरान ज्ञात से अज्ञात की ओर शिक्षण सूत्र का प्रयोग करना चाहिए।

Scanned with CamScanner

② विषय-वस्तु - किसी भी प्रकार के अधिगम को प्राप्त करने के लिए विषय-वस्तुओं का भी प्रभाव पड़ता है। साधारणतया: कठिन व अरार्थक बातें की अपेक्षा सरल व सार्थक बातें जल्दी सीखी जाती हैं यदि विषय-वस्तु बालक के उपयोग व महत्व की है तो बालक उसे शीघ्रता से ग्रहण कर लेता है अतः बालकों को अधिगम कराते समय विषय-वस्तु को उसके जीवन से सम्बन्धित करके पढ़ाना चाहिए।

③ शारीरिक स्वास्थ्य - अधिगम के लिए शारीरिक स्वास्थ्य होना बहुत जरूरी है। अगर हमारा स्वास्थ्य सही नहीं है तो हम कोई भी ज्ञान या क्रिया को भलीभांति नहीं सीख पाते हैं।

④ परिपक्वता (Maturity) - छोटी कक्षाओं में बालकों की मांस पेशियों को प्रशिक्षित किया जाता है जिससे कि वह कलम, किताब, कॉपी आदि उचित प्रकार से पकड़ सकें। परन्तु जैसे-२ बालक बड़ा होता है तो उसकी योग्यता एवं क्षमता को ध्यान में रखकर पाठ को पढ़ाया जाता है अतः सिखाई जाने वाली क्रियाएं उनकी आयु व क्षमता के अनुसार होनी चाहिए।

⑤ मानसिक स्वास्थ्य - अगर हमारा मानसिक स्वास्थ्य सही नहीं है तो भी अधिगम में बाधा आती है। मानसिक सन्तुलन भी अधिगम को प्रभावित करता है। सन्तुलन अच्छा है तो जल्दी सीखते हैं।

⑥ अधिगम की इच्छा - यदि बालकों में सीखने की इच्छा है तो वह प्रतिकूल परिस्थिति में भी

Scanned with CamScanner

सीख लेता है। और यदि उसमें सीखने की इच्छा नहीं है तो उसे किसी भी परिस्थिति में उसे जबरदस्ती सीखाया नहीं जा सकता है।

⑦ प्रेरणा- अगर अच्छी प्रेरणा मिलेगी तो जो व्यक्ति निष्क्रिय है वह भी कार्य करेगा। इसीलिए प्रेरणा भी अधिगम को प्रभावित करती है

⑧ थकान- थकान अधिगम में बाधा उत्पन्न करती है। मानसिक तथा शारीरिक थकान से अधिगम में ह्रास हो जाता है। अतः बालक को शिक्षा के साथ-२ पाठसहगामी क्रियाएं, खेल-कूद आदि क्रियाएं भी कराई जानी चाहिए।

⑨ वातावरण- बालक वातावरण में ही रहकर अधिक अधिगम क्रिया करता है। इसीलिए वातावरण का भी अधिगम पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। विद्यालय की शिक्षा के साथ-२ यह भी आवश्यक है कि उसके घर के आस-पास का वातावरण उत्तम होना चाहिए

⑩ सीखने की विधियाँ- बालक को सीखने के लिए ऐसी विधियों का प्रयोग किया जाना चाहिए जिससे कि उसे अधिगम में आसानी हो। ये विधियाँ बालक की मानसिक योग्यता के अनुसार होनी चाहिए।

⑪ अध्यापक की भूमिका- अध्यापक का अधिगम में महत्त्वपूर्ण स्थान है। बालक अध्यापक से/के व्यक्तित्व से बहुत हद तक प्रभावित होता है। अतः अध्यापक को बालक को अच्छी शिक्षा के साथ-२ उस शिक्षा का स्वयं भी पालन करना चाहिए और छात्र के समक्ष आदर्श प्रस्तुत करना चाहिए।

⑫ अभ्यास विभाजन- उत्तम अधिगम के लिए आवश्यक है कि हमें उस कार्य का प्रतिदिन अभ्यास करते रहना चाहिए ताकि बाद में वह कार्य और अधिक कठिन न हो जाए। इस प्रकार अभ्यास द्वारा अधिगम में निपुण बनाया जा सकता है

Scanned with CamScanner

⑬ आत्म अवेक्षण - आत्म अवेक्षण भी अधिगम पर सकारात्मक प्रभाव डालता है। किसी बालक की आत्म अवेक्षण का उपहास नहीं उड़ाना चाहिए नहीं तो वह अधिगम पर ध्यान नहीं दे पायेगा।

⑭ प्रशंसा व आरोप (पुरस्कार व दण्ड) - बालक की समय-समय पर प्रशंसा करते रहनी चाहिए ताकि वह अपना अधिगम आत्म-विश्वास पर कर सके और जरूरत पड़ने पर दण्ड भी देना चाहिए ; जिससे बालक अधिगम पर ध्यान दे सके।

⑮ योग्यताएं - यह बात तो रहना उचित होगा कि संसार में हर मनुष्य अपनी योग्यता के अनुसार ही अधिगम करता है।

* अधिगम की विधियाँ - अधिगम के लिए अनेक प्रकार की विधियों का प्रयोग किया जाता है। जिसमें कुछ प्रमुख विधियाँ निम्नलिखित हैं -

① करके सीखना।
② निरीक्षण द्वारा सीखना।
③ परीक्षण द्वारा सीखना।
④ वाद-विवाद विधि।
⑤ वाचन विधि। (पढ़ के अध्ययन करना) तीन प्रकार → मौन, → बोलकर, → अनुकरण
⑥ अनुकरण विधि।
⑦ प्रयास एवं त्रुटि विधि।
⑧ पूर्ण विधि।
⑨ अंश विधि।
⑩ अन्तराल विधि।
⑪ सतत् विधि।
⑫ परिणामों का ज्ञान।

Scanned with CamScanner

(13) शिक्षण विधियाँ ।

(14) सक्रिय प्रत्यन विधि ।

उपरोक्त विधियाँ परस्पर एक दूसरे से भिन्न नहीं हैं व्यक्ति आवश्यकतानुसार इनमें से कुछ विधियों को एक साथ मिलाकर सीखने में प्रयत्न कर सकते हैं। सीखने की कौन सी विधि अधिक श्रेष्ठ है। यह एक कठिन प्रश्न है। वास्तव में किसी एक विधि को सर्वश्रेष्ठ कहना उचित नहीं है। पाठ्य सामग्री, बालक की शारीरिक व मानसिक स्तर की तथा अन्य वातावरणीय कारकों के अनुरूप कोई एक विधि अन्य विधियों से श्रेष्ठ हो सकती है।

✓ * सीखने के नियम - थार्नडाइक पहले मनोवैज्ञानिक थे जिन्होंने अपने प्रयोगों के आधार पर सीखने के नियमों को प्रस्तुत किया। प्रारम्भ में सीखने के तीन ही नियम बताए गये। परन्तु बाद में अन्य 5 नियम और दिये गये। जिन्हें क्रमशः सीखने के मुख्य व गौण नियम कहते हैं

→ सीखने के मुख्य नियम -

① तत्परता का नियम। (Law of Readiness)
② अभ्यास का नियम। (" " Exercise)
③ प्रभाव का नियम। (" " Effect)

→ सीखने के गौण या द्वितीय (Secondary) नियम -

① अभिवृत्ति अथवा मनोवृत्ति का नियम। (Law of Attitude)
② बहुअनुक्रिया का नियम। [Law of Multiple-Response]
③ आंशिक क्रिया का नियम।
④ सादृश्यीकरण या समानता का नियम।
⑤ सान्दर्भ का नियम

Scanned with CamScanner

① तत्परता का नियम - (तैयारी का नियम) - सीखने वाला तत्पर होना चाहिए।

व्यक्ति के सामने कोई समस्या आने पर उसे हल करने का प्रयास होना चाहिए। यदि शिक्षार्थी तत्पर नहीं है तो लाख कोशिशें के बाद भी उसे कुछ नहीं सिखाया जा सकता अतः शिक्षार्थियों को सीखने के लिए तैयार करना बहुत आवश्यक होता है। तैयार करने हेतु एक शिक्षक विद्यार्थी के पूर्व पाठ से सम्बन्धित प्रश्नों को पूछ सकता है। साथ ही इसमें ज्ञात से अज्ञात की ओर शिक्षण सूत्र का पालन किया जा सकता है विद्यार्थियों में सीखने से पहले सम्बन्धित प्रकरण के प्रति रुचि जिज्ञासा तथा इच्छा जाग्रत करना परम आवश्यक हो जाता है इससे सम्बन्धित तीन परिस्थितियाँ कार्य करती हैं -

(i) कार्य करने के लिए तत्पर होने पर यदि कार्य मिलता है तो संतोष की प्राप्ति होती है।

(ii) कार्य करने के लिए तत्पर होने पर यदि कार्य न किया जाए तो असन्तोष की प्राप्ति होती है।

(iii) कार्य करने के लिए यदि तत्पर न हो फिर भी यदि कार्य मिल जाए तो भी असन्तोष की प्राप्ति होती है।

② अभ्यास का नियम - यदि सीखने की क्रिया की आवृत्ति हो, उसे बार-बार दोहराया जाये, उसका अभ्यास किया जाए तो सीखना स्थायी हो जाता है अन्यथा कुछ समय पश्चात विस्मृत हो जाता है। इसीलिए इसे उपयोग एवं अनुप्रयोग का नियम भी कहते हैं।

इस नियम की कुछ मनोवैज्ञानिकों ने आलोचना यह कहकर की सीखना केवल अभ्यास से

Scanned with CamScanner

नहीं होता बल्कि समझ व सूझ से भी होता है। यह केवल आवृत्ति पर ही निर्भर नहीं करता यदि ऐसा होता तो सही व गलत दोनों चीजों की आवृत्ति होती। इस आधार पर आवेगम केवल सही अनुक्रिया को ही कहा जाता है। इस आधार पर थॉनडाइक ने इसमें संशोधन कर इसे नियन्त्रित अभ्यास का नियम कहा। इसके अनुसार सीखने की प्रक्रिया में अभ्यास या आवृत्ति के साथ-साथ अर्थ को समझने तर्क करने विचारों में सामंजस्य आदि कई क्रियाओं को सम्मिलित किया।

③ प्रभाव का नियम - यदि किसी क्रिया के परिणाम से व्यक्ति को सन्तोष की प्राप्ति होती है तो वह क्रिया बार-बार की जाती है और यदि उस क्रिया के व्यक्ति को कोई लाभ प्राप्त न हो तो वह क्रिया पुनः नहीं की जाती और वह सीख नहीं पाता। अतः सीखने में एक उद्दीपक का होना अत्यन्त आवश्यक होता है क्योंकि व्यक्ति उसी को दीपक के आधार पर अपनी अनुक्रिया करता है।

फिर भी यह नियम कार्य करता है। पुरस्कार व दण्ड इसकी उपयोगिता को प्रदर्शित करता है। व्यक्ति को प्राप्त होने वाला पुरस्कार उसके द्वारा किये गये कार्य को बढ़ावा देता है और प्राप्त होने वाला दण्ड उसमें सुधार करता है।

⇒ सीखने के गौण नियम - (द्वितीय नियम)

① अभिवृत्ति या मनोवृत्ति का नियम - थॉर्न डाइक ने

Scanned with CamScanner

स्पष्ट किया कि अगर सिखाई जाने वाली सामग्री और सीखने के प्रति सीखने वाले की अभिवृत्ति सकारात्मक होती है। अतः उसकी मनोवृत्ति इसके अनुकूल होती है तो वह शीघ्रता से सीखता है। अतः यह आवश्यक है कि सिखाई जाने वाली सामग्री सीखने वाले की अभिवृत्ति के अनुकूल हो या उसकी अभिवृत्ति अधिगम सामग्री की ओर (प्रति) जागृत की जाये।

② बहुअनुक्रिया का नियम - थॉर्न डाइक के अनुसार "जब मनुष्य के सामने कोई समस्या उत्पन्न होती है तो वह उसके समाधान के लिए अनेक प्रत्यन्त करता है और अन्त में जिन प्रत्यनों से उसे सफलता मिलती है उनका वह चुनाव करता है उसे ही सीखना कहते हैं"। अतः आवश्यक है कि सीखने वाले को समस्या के अनेक समाधान सोचने और उनमें से सही का चुनाव करने के अवसर दिये जायें।

③ आंशिक क्रिया का नियम - यदि समस्या को भागों में विभक्त कर एक-एक भाग का समाधान खोजा जाता है तो बड़ी से बड़ी समस्या का समाधान आसानी से हो जाता है। साथ ही सीखने वाले अपनी समस्या के मुख्य तत्वों को छाँट लेते हैं और उन्हें अपनी अनुक्रियाओं का आधार बनाकर अपनी समस्या का समाधान करते हैं। यह सीखने की प्रभावी विधि है और यह अंश से पूर्ण की ओर शिक्षण-सूत्र का पालन करती है।

④ सदृश्यीकरण का नियम - इसके अन्तर्गत जब व्यक्ति में समानता

सामने जब कोई समस्या उत्पन्न होती है, तो वह इससे उससे पूर्व या उसी प्रकार की समस्या के समाधान में किये गये प्रयत्नों का स्मरण करता है, उनसे तुलना करता है और फिर उनके अनुसार अनुक्रिया करता है, अतः आवश्यक है कि शिक्षार्थियों को तत्सम्बन्धी पूर्व ज्ञान के स्मरण और प्रयोग के अवसर प्रदान किये जायें।

⑤ साहचर्य का नियम- इसके अन्तर्गत दो उद्दीपकों में साहचर्य स्थापित होने पर एक उद्दीपक के प्रति होने वाली अनुक्रिया दूसरे उद्दीपक के प्रति भी होने लगती है, यह नियम 'पावलॉव' के सिद्धान्त का ही दूसरा रूप है।

* सीखने के स्तर- यह तो सर्वविदित है कि मनुष्य जीवन पर्यन्त सीखता रहता है। सीखने की क्रिया में मनुष्य सर्वप्रथम किसी वस्तु, क्रिया अथवा तथ्य की जानकारी प्राप्त करता है फिर उसे समझने का प्रयास करता है और फिर जीवन में आवश्यकता पड़ने पर उसका प्रयोग करता है। मनुष्य अपने सीखे हुए ज्ञान अथवा कौशल के आधार पर नये तत्वों की खोज करता है। मनुष्य के सीखने की इस मानसिक क्रिया को तीन स्तरों में विभाजित जा सकता है-

① स्मृति स्तर का सीखना।
② बोध स्तर का सीखना।
③ चिन्तन स्तर का सीखना।

① स्मृति स्तर का सीखना (अधिगम)- जब सीखने वाला किसी वस्तु, क्रिया अथवा तथ्य का ज्ञान बिना सोचे समझे सीधे प्राप्त

Scanned with CamScanner

करता है तो इस प्रकार का सीखना स्मृति स्तर का सीखना कहलाता है। इसको सीखने के लिए इसका कोई विचार नहीं करता अतः इसे 'विचारहीन सीखना' भी कहते हैं। इसमें आंशिक रूप से तथ्यों को ग्रहण करने के कारण यह सबसे निम्न स्तर का सीखना माना जाता है। यह समय के अन्तराल व उपयोग के अभाव में विस्मरण हो जाता है। इसमें निम्न चार प्रक्रियाएं मिलती हैं-

(i) ग्रहण- सीखने वाला सर्वप्रथम किसी वस्तु, क्रिया अथवा तथ्य का ज्ञान अपनी ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा करता है जो कि एक प्रतिमा अथवा चिन्ह के रूप में उसके अचेतन मन में संचित हो जाता है।

(ii) धारण- सीखे गये तथ्यों को मस्तिष्क में बनाये रखना धारण कहलाता है। यह अधिक समय या कम समय या हमेशा के लिए हो सकता है इसे आयु, परिपक्वता, स्वास्थ्य, रुचि आदि प्रभाव डालते हैं।

(iii) प्रत्युया स्मरण- धारण किये अनुभवों को पुनः चेतन में लाने और उन्हें प्रकट करने को प्रत्या स्मरण कहते हैं। धारण अनुभवों को चेतन मन पर न ला सकना विस्मरण कहलाता है।

(iv) प्रत्युया अभिज्ञान/ पहचान- प्रत्यास्मरण पर उन्हें कुछ अनुभवों से अलग करके और कुछ से जोड़ने तथा स्पष्ट रूप से समझकर अभिज्ञा करने को प्रत्या अभिज्ञान कहते हैं। यह पहचान आंशिक, सत्य या पूर्ण सत्य हो सकती है। किसी में उपरोक्त चार प्रक्रियाएं जितनी सही रूप में होती है स्मृति स्तर का सीखना उतना ही अच्छा होता है। बच्चे प्रायः

उसी स्तर का सीखते हैं। ये अधिगम आगे के दो प्रकार के अधिगमों की आधारशिला होता है

② बोध स्तर की सीखना - जब सीखने वाला ज्ञान को सोच समझकर प्राप्त करता है तो इस प्रकार का सीखना 'बोध स्तर का सीखना' कहलाता है। मनुष्य के द्वारा इस प्रकार के अधिगम में अपनी बुद्धि का प्रयोग किया जाता है और साथ ही अपने विचारों को भी महत्व देता है अतः इस आधार पर इसे विचारपूर्ण अधिगम भी कहते हैं। इस स्तर पर निम्न क्रियाएं होती हैं -

(i) पूर्व ज्ञान के आधार पर सीखना।
(ii) विश्लेषण कर कारण कार्य सम्बन्ध देखना।
(iii) छिपे तथ्यों की खोज करना।
(iv) मिलते-जुलते तथ्यों से भेद करना।
(v) अपने शब्दों में अभिव्यक्त करना।
(vi) नवीन परिस्थितियों में प्रयोग करना।

सीखने वाला उपरोक्त क्रियाओं को जितने सही रूप में करता है उसका बोध स्तर का अधिगम उतना ही उच्च होता है। इसमें सीखने वाला विचारपूर्ण मानसिक क्रियाएं करता है जिसके आधार पर वह नया ज्ञान प्राप्त करता है अतः यह स्मृति स्तर से उत्तम प्रकार का होता है। यह समय के अन्तराल व उपयोग के अभाव में बहुत समय तक स्मरण रहता है। और कुछ को जीवनभर याद रहता है।

③ चिन्तन स्तर का सीखना - जब सीखने वाला किसी (गूढ़) गहरे तथ्य को समझने के लिए चिन्तन करता है तो यह 'चिन्तन स्तर का सीखना' कहलाता है। कुछ चिन्तन को बोध स्तर में करना पड़ता है परन्तु जब चिन्तन गहरा या गूढ़ किया जाए

Scanned with CamScanner

तो वह चिन्तन स्तर में आ जाता है। यह प्रायः समस्या केन्द्रित होता है। और इसमें स्मृति एवं बोध स्तर का सीखना भी निहित होता है। इसमें निम्न क्रियाएं होती हैं-

(i) समस्या के स्वरूप को समझा जाता है।
(ii) पूर्व ज्ञान के आधार पर समस्या समाधान के उपाय खोजे जाते हैं।
(iii) तथ्यों के आधार पर उपकल्पनाओं का निर्माण किया जाता है।
(iv) एक के बाद दूसरे उपाय का प्रयोग किया जाता है।
(v) सही उपाय का चयन व निरर्थक उपायों को छोड़ दिया जाता है।
(vi) उस उपाय की सत्यता की जाँच की जाती है।

इसमें सीखने वाला स्वयं करके सीखता है, और साथ ही अपनी क्रियाएं तर्क के आधार पर करता है अतः यह उच्चतम स्तर का सीखना होता है। इसमें सीखा गया ज्ञान एवं कौशल स्थाई होता है। यह जीवन की समस्याओं के समाधान नये सृजन एवं नई-नई खोजों का आधार होता है परन्तु यह निष्कर्ष स्तर तभी प्राप्त होता है जब व्यक्ति स्मृति व बोध स्तर का सीखना प्राप्त कर चुके होते हैं। मनुष्य के लिए तीनों स्तरों का सीखना आवश्यक होता है। इन्हें सीखने की तीन सीढ़ियां माना जा सकता है। इन सब चढ़े बिना उत्तम सीखना सम्भव नहीं।

* शिक्षण एवं सीखने की प्रक्रिया - जब हम शिक्षण एवं सीखने को संयुक्त रूप में लेते हैं, तो अधिगम पर प्रभाव डालने वाले 6 कारक सामने आते हैं-

① सीखने वाला - शिक्षार्थी।

Scanned with CamScanner

② सीखने वाला - शिक्षक ।
③ सिखाई जाने वाली सामग्री - पाठ्यवस्तु ।
④ शिक्षण विधि - किस विधि से पढ़ाया जा रहा है।
⑤ सम्बन्धित वर्गावरण ।

शिक्षण एवं सीखने की प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाने के लिए उपरोक्त 5 (पांचों) अंगो का उचित प्रयोग आवश्यक होता है। इनसे सम्बन्धित कार्य कारक निम्न प्रकार हैं-

① शिक्षार्थी से सम्बन्धित कार्य कारक -
→ आयु एवं परिपक्वता ।
→ मानसिक स्वास्थ्य ।
→ शारीरिक स्वास्थ्य ।
→ व्यक्तिगत विभिन्नताएँ ।
→ रुचि ।
→ अभिरुचि ।
→ क्षमता ।
→ अभिप्रेरणा व इच्छा शक्ति ।

② शिक्षक से सम्बन्धित कारक -
→ विषय-वस्तु का ज्ञान ।
→ उच्चारण स्पष्ट होना ।
→ स्वास्थ्य (शारीरिक व मानसिक) ।
→ रुचि ।
→ व्यक्तित्व ।
→ शिक्षण कौशल ।
→ शैक्षिक वातावरण में सक्षम ।
→ शिक्षार्थियों के प्रति व्यवहार ।

Scanned with CamScanner

③ सीखाई जाने वाली पाठ्यवस्तु -

→ छात्रों के स्तर अनुसार।
→ पाठ्य सहगामी क्रियाएं।
→ मानव जीवन से सम्बन्धित।
→ सरल प्रकृति।
→ पाठ्यवस्तु का संगठन।

④ शिक्षण विधि से सम्बन्धित कारक -

→ स्तर अनुसार।
→ उपयोगिता।
→ शिक्षा तकनीक का प्रयोग।
→ शिक्षा साधनों का प्रयोग।
→ पाठ्यक्रम।

⑤ पर्यावरण से सम्बन्धित कारक -

→ शान्त वातावरण।
→ प्राकृतिक वातावरण।
→ सामाजिक वातावरण।
→ शिक्षण एवं शिक्षण का समय।
→ थकान एवं विश्राम।

✱ थार्नडाइक का सम्बन्धवाद का सिद्धान्त - (उद्दीपक अनुक्रिया सिद्धान्त, सम्बन्धवाद, बन्धन सिद्धान्त, प्रयास व त्रुटि सिद्धान्त, उत्तेजना प्रतिक्रिया सिद्धान्त, सीखने का सम्बन्ध सिद्धान्त) -
अमेरिका

प्रयोग -

Scanned with CamScanner

थार्नडाइक के प्रयोग के आधार पर कहा जा सकता है कि बिल्ली द्वारा पिंजड़ा खोलने की प्रक्रिया में निम्न सोपान आते हैं-

(i) चालक - बिल्ली की भूख ने चालक का कार्य किया,

Scanned with CamScanner

जिसको पिंजड़े के बाहर रखे भोजन ने अधिक रुचिकर किया।

② लक्ष्य - बिल्ली का एक मात्र लक्ष्य पिंजड़े के बाहर आकर भोजन प्राप्त करना था।

③ अवरोध - बिल्ली का पिंजड़े में बन्द होना उसकी लक्ष्य प्राप्ति में अवरोध था।

④ अनियमित क्रियाएं - बिना खोलने का तरीका जाने बिना बिल्ली ने बाहर आने का प्रयास किया।

⑤ संयोगवश सफलता - लगातार किये गये प्रयासों के दौरान संयोगवश बिल्ली ने दरवाजा खोल लिया।

⑥ सही अनुक्रिया चयन - धीरे-धीरे बिल्ली ने फट्टे (लीवर) को दबाकर दरवाजा खोलने का सही ढ़ग पहचान लिया।

⑦ दृढ़ीकरण - अन्त में बिल्ली ने सभी गलत अनुक्रियाओं का त्याग करते हुए खट्टे को दबाकर दरवाजा खोलने के ढ़ग को सीख लिया और इसी अनुक्रिया को सुदृढ़ किया।

* प्रयास व भूल सिद्धान्त की विशेषताएं -

① यह सिद्धान्त सम्बन्धवाद का समर्थक है परन्तु यह उद्दीपक अनुक्रिया में सम्बन्ध स्थापित होने को ही सीखना मानता है जबकि सीखने में पूर्व अनुभव व नवीन अनुभव में भी सम्बन्ध

Scanned with CamScanner

स्थापित होता है।

② इसके अनुसार सीखे गये ज्ञान का प्रयोग करना ही सीखना है। जब तक प्रयोग न हो उसे सीखना नहीं कह सकते।

③ सीखने के लिए उद्देश्य और उद्देश्य के लिए प्रेरक और अभिप्रेरक होना आवश्यक है और साथ ही सहायक उद्दीपक का होना भी आवश्यक है।

④ सीखने के लिए प्रत्यन्त आवश्यक है, यह प्रत्यन्त व भूल द्वारा ही सीखने को सही अनुक्रिया करना कहता है।

⑤ इसमें सीखने के कुछ नियम प्रतिपादित किये गये हैं जो सीखने-सीखाने की प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाते हैं।

* सीमाएं -

① बुद्धि का अधिक प्रयोग नहीं।
② यांत्रिक विधि।
③ तीर या तुक्का।
④ निरर्थक प्रतिक्रियाएं।
⑤ पर्याप्त शक्ति व समय की आवश्यकता।
⑥ अन्तर्दृष्टि का अभाव।
⑦ पिछड़े बालकों के लिए उपयोगी।

* शिक्षा में उपयोगिता -

Scanned with CamScanner

① प्रेरणा का महत्व । (प्रेरित करना आवश्यक है।)
② सरल से कठिन ।
③ प्रयोगात्मक साक्षी ।
④ कुशलताएँ सीखना ।
⑤ वैज्ञानिक सुधार (आधार)।
⑥ आदतों में सुधार ।
⑦ अभ्यास द्वारा सीखना ।
⑧ दोहराना ।
⑨ प्रयत्न एवं भूल पर बल ।
⑩ पुनरावृत्ति ।
⑪ कृतिमें क्रमिक अध्ययन ।
⑫ पुरस्कार का महत्व ।

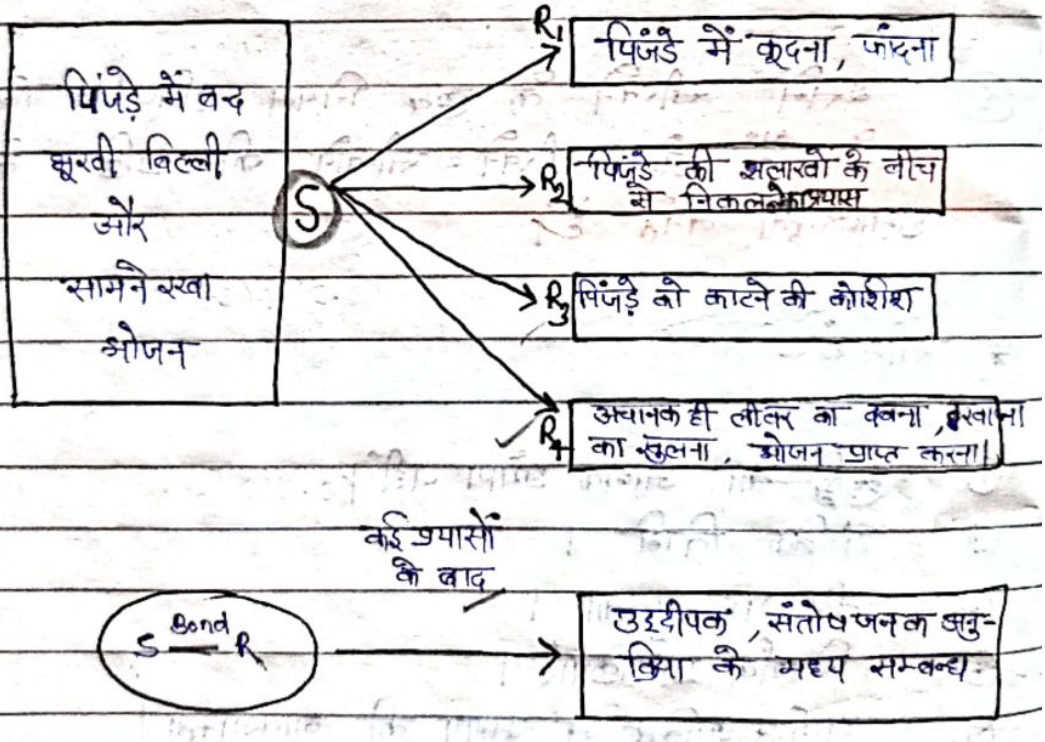

* पावलोव का शास्त्रीय अनुबन्धन सिद्धान्त - (अनुकूलित अनुक्रिया सिद्धान्त, अनुबन्धित अनुक्रिया, सिद्धान्त अनुबन्धित, सहज क्रिया सिद्धान्त)

Scanned with CamScanner

→ प्रयोग - [Ivan Petrovich Pavlov]

अनुक्रियाएं दो प्रकार की होती हैं-

(i) स्वभाविक अनुक्रिया ।

(ii) अस्वभाविक अनुक्रिया (अर्जित अनुक्रिया)

इस सिद्धान्त के 4 मुख्य अंग हैं-

(i) स्वाभाविक उद्दीपक (U.C.S)
Unconditional Stimulus

(ii) स्वभाविक अनुक्रिया (U.C.R)
Unconditional Response

(iii) अनुबन्धित उद्दीपक (C.S)

(iv) अनुबन्धित क्रिया
सहज
(Conditional Reflex Action)

Scanned with CamScanner

I.

C.S → प्रतिक्रिया नहीं घण्टी	C.S घण्टी + → लार (U.C.R) U.C.S भोजन
U.C.S → लार [भोजन U.C.R]	
अनुबन्धन से पूर्व	अनुबन्धन के दौरान

C.S → लार घण्टी लार (U.C.R)
अनुबन्धन के बाद

II.

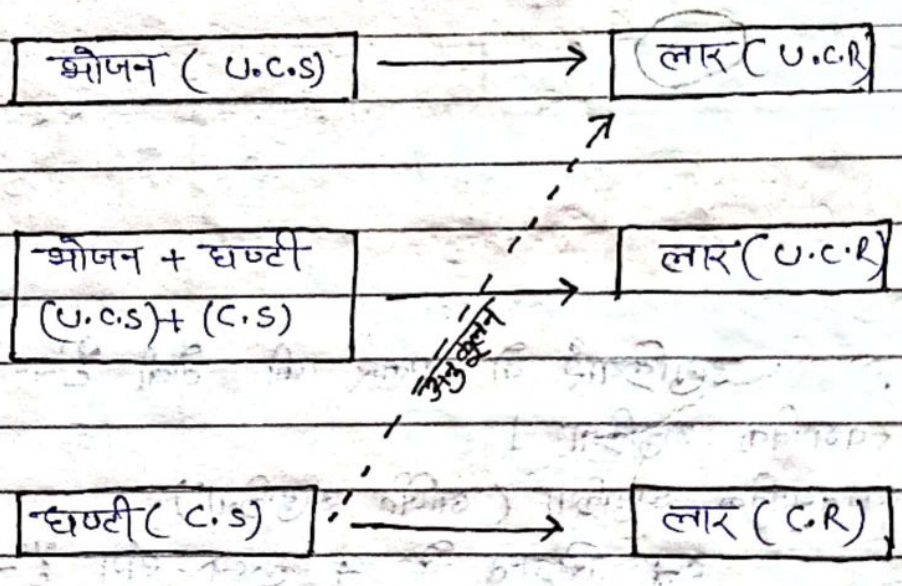

→ अनुबन्धन की दशाएं – अधिगम के Classical अनुबन्धन सिद्धान्त के अनुसार निम्न 4 दशाएं महत्वपूर्ण होती हैं–

(i) स्वाभाविक उद्दीपक (U.C.S) व अनुक्रिया (U.C.R) का एक निश्चित क्रम होना चाहिए। पहले स्वाभाविक उद्दीपक (C.S) फिर लगभग आधे से 2 सेकण्ड के पश्चात् स्वाभाविक उद्दीपक (U.C.S) दिया जाना चाहिए

Scanned with CamScanner

गए समय अन्तराल कम या अधिक होने पर सीखना प्रभावशाली नहीं होगा।

C.S → time → U.C.S + Response (अनुक्रिया)

(ii) स्वाभाविक उद्दीपक का अस्वाभाविक उद्दीपक से अधिक शक्तिशाली होना चाहिए। यदि (C.S) अधिक शक्तिशाली होगा तो जीव स्वाभाविक उद्दीपक पर ध्यान ही नहीं देगा।

(iii) अस्वाभाविक उद्दीपक को स्वाभाविक उद्दीपक के साथ अनेक बार दोहराना होगा। तब ही अनुबन्धन हो पायेगा। एवं C.S में U.C.S के गुण आ पाएँगे।

(iv) अनुबन्धन के समय उपयुक्त परिस्थितियाँ होनी चाहिए हम यह नहीं कह सकते हैं कि अनुबन्धन के समय कोई बाह्य अवरोध उपस्थित न हों।

→ अनुबन्धन के सिद्धान्त - टावर्सकी व अनुबन्धन के सम्बन्ध में किये गये अनेक प्रयोगों में अनुबन्धन के सम्बन्ध में अनेक महत्वपूर्ण प्रत्यों व सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया है, जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं -

(1) उत्तेजन - अनुबन्धित उद्दीपक (C.S) को प्राकृतिक उद्दीपक (U.C.S या U.S) के साथ बार-बार प्रस्तुत करने पर अनुबन्धन के फलस्वरूप प्राणी में उत्तेजन उत्पन्न हो जाता है, जो उसे अनुबन्धित अनुक्रिया (C.R) करने को तत्पर कर देता है।

Scanned with CamScanner

② विलोपन - अनुबन्धन के उपरान्त जब अनुबन्धित उद्दीपक (C.S) के उपरान्त प्राणी को प्राकृतिक उद्दीपक अनेक बार नहीं दिया जाता है तो धीरे-धीरे प्राणी अनुबन्धित अनुक्रिया (C.R) करना बन्द कर देता है।

③ स्वतः पुनर्लाभ - विलोपन के कुछ समय पश्चात् यदि प्राणी के समक्ष अनुबन्धित उद्दीपक (C.S) प्रस्तुत किया जाता है, तो कभी-कभी प्राणी अनुबन्धित अनुक्रिया (C.R) पुनः कर देता है।

④ उद्दीपक सामान्यीकरण - अनुबन्धन होने के उपरान्त प्राणी अनुबन्धित उद्दीपक (C.S) से मिलते-जुलते अन्य उद्दीपकों के प्रति भी प्रायः उसी ढंग से अनुक्रिया करता है।

⑤ उद्दीपक विभेदन - अनुबन्धन के प्रयासों की संख्या बढ़ाने पर प्राणी मूर्त अनुबन्धित उद्दीपक तथा अन्य समान उद्दीपकों में विभेद करने लगता है।

⑥ वाह्य अवरोध - अनुबन्धन के दौरान यदि कोई नया उद्दीपक, अनुबन्धित उद्दीपक (C.S) के साथ दिया जाता है तो पूर्व अनुबन्धन की प्रक्रिया धीमी या अवरुद्ध हो सकती है।

⑦ कालिक क्रम - अनुबन्धन के लिए अनुबन्धित उद्दीपक (C.S) तथा स्वाभाविक उद्दीपक (N.S) के बीच समय अन्तराल के बढ़ाने पर अनुबन्धन कमजोर हो जाता है।

Scanned with CamScanner

⑧ द्वितीय कोटि अनुबन्धन - किसी अनुबन्धित उद्दीपक के साथ किसी अन्य अ-स्वाभाविक उद्दीपक को बार-बार प्रस्तुत करने पर नवीन उद्दीपक अनुबन्धित अनुक्रिया के लिए अनुबन्धित हो जाता है।

⑨ पुनर्बलन - अनुबन्धन को पुनर्बलित करने के लिए यह महत्वपूर्ण है कि अनुबन्धित उद्दीपक (C.S) के साथ स्वाभाविक उद्दीपक भी बीच-बीच में दिया जाता है।

→ Classical अनुबन्धन की विशेषताएं -

① अनुबन्धन सिद्धान्त सम्बद्ध सहज क्रिया पर आधारित है। छोटे बच्चे प्रायः इसी रूप में सीखते हैं।
② यह सिद्धान्त इस बात पर बल देता है कि यदि स्वाभाविक उद्दीपक (U.C.S) के साथ अनुबन्धित उद्दीपक (C.S) का प्रयोग किया जाये तो स्वाभाविक अनुक्रिया में वृद्धि होती है। इसे अनुबन्धित अनुक्रिया (C.R) कहा जाता है।
③ यह सिद्धान्त अनुबन्धन और पुनर्बलन पर बल देता है। पुनर्बलन से सीखने की गति बढ़ती है, और अनुबन्धन से सीखना स्थाई होता है।
④ इस सिद्धान्त के अनुसार सीखने के लिए अनुबन्धित उद्दीपक (C.S) और अनुबन्धित अनुक्रिया में सम्बन्ध होना आवश्यक है।
⑤ व्यवहार अनुबन्धन के द्वारा बच्चों की बुरी आदतों के स्थान पर अच्छी आदतें प्रतिस्थापित की जा सकती हैं और कुसमायोपित बच्चों को सुसमायोजन की ओर उन्मुख किया जा सकता है।

Scanned with CamScanner

III -

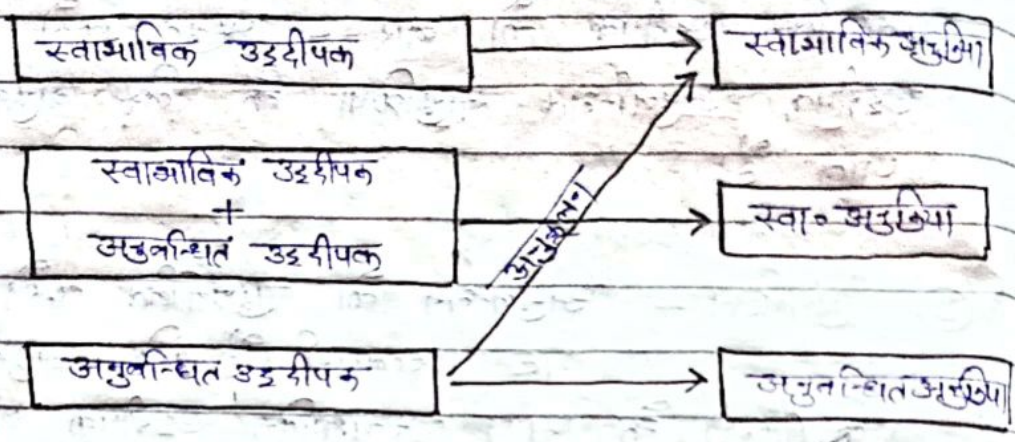

(अनुबन्धित उद्दीपक या अस्वाभाविक उद्दीपक)

→ शास्त्रीय अनुबन्धन की कमियाँ -

(i) यह सिद्धान्त पशुओं पर प्रयोग करके प्रतिपादित किया गया है और बालकों पर प्रयोग करके इसकी पुष्टि की गई है यह परिपक्व मनुष्यों की सीखने की प्रक्रिया पर पूर्ण रूप से लागू (लाग्) भूत नहीं होता है।

(ii) इसमें मनुष्य को एक यांत्रिक मशीन माना गया है और सीखने की प्रक्रिया को एक यान्त्रिक प्रक्रिया माना गया है। यह मनुष्य के चिन्तन एवं तर्कपूर्ण सीखने की प्रक्रिया को प्रस्तुत नहीं करता है।

(iii) अनुबन्धित अनुक्रिया द्वारा सीखना स्थायी नहीं होता है।

(iv) अनुबन्धन प्रक्रिया कुछ विशेष परिस्थितियों में ही होती है जबकि सीखना स्वाभाविक रूप से सदैव चलता रहता है।

(v) यह सिद्धान्त मनुष्यों के सीखने की प्रक्रिया की सही व्याख्या नहीं करता है।

Scanned with CamScanner

→ शिक्षा में उपयोगिता - अनुकूलित अनुक्रिया सिद्धान्त का आधार व्यवहार है। इस सम्बन्ध में वॉटसन ने कहा है - "मुझे कोई भी बच्चा दे दो, मैं उसे जैसा चाहूँ वैसा बना सकता हूँ।"

शिक्षा के क्षेत्र में इसका प्रयोग निम्न प्रकार से है -

(i) क्रिया अनुबन्धन पर अनुबलन पर बल।
(ii) शिक्षा सहायक साधनों पर बल।
(iii) पुरस्कार एवं दण्ड पर बल।
(iv) त्रुटि, चिन्तन एवं तर्क की आवश्यकता नहीं।
(v) आदतों पर सुधार।
(vi) सामाजीकरण में सरलता।
(vii) भाषा का विकास।
(viii) अभिप्रेरणा प्रदान करना।
(ix) मानसिक व संवेगात्मक अस्थिरता (अस्पष्टता) का उपचार।
(x) अभिव्यक्ति पर विकास। (द्वारा)

→ शिक्षक के लिए उपयोगिता -

(i) यह सिद्धान्त सहज सम्बन्ध के सिद्धान्त पर बल देता है क्योंकि बाल्यकाल की बहुत सी क्रियाएं ऐसी होती हैं, जो किसी वस्तु विशेष से जुड़ जाती हैं और जीवन भर याद रहती (रखती) है।
(ii) यह सिद्धान्त क्रिया की पुनरावृत्ति पर बल देता है। अतः शिक्षकों को विषयवस्तु की पुनरावृत्ति पर बल देना चाहिए।
(iii) कोई भी प्राणी केवल क्रियाशील होकर ही सीख सकता है अतः क्रियाशीलता के सिद्धान्त का प्रयोग अधिगम में किया जाना चाहिए।

Scanned with CamScanner

(iv) यह सिद्धान्त पुनर्बलन के सिद्धान्त पर आधारित है क्योंकि बालकों को पता होता है कि बुरे काम पर दण्ड मिलेगा और अच्छा कार्य करने पर पुरस्कार। इस सिद्धान्त से बच्चों में अच्छी आदतें विकसित कर बुरी आदतों को सुधारा जा सकता है।

(v) शिक्षण में श्रव्य-दृश्य सामग्री का प्रयोग इसी सिद्धान्त पर आधारित है।

(vi) मानसिक एवं संवेगात्मक रूप से अस्थिर बालकों का इलाज इस अनुबन्धन प्रक्रिया से आसानी से किया जा सकता है।

(vii) विभिन्न प्रकार के वातावरण में समायोजन करने में यह विधि लाभदायक है।

(viii) इस सिद्धान्त के अनुसार बच्चों को कभी भी अपशब्द नहीं कहने चाहिए क्योंकि बच्चों में प्रेम और घृणा का विकास इसी प्रकार होता है।

⊛ स्किनर - बी० एफ० स्किनर (Burrhus Frederic Skinner)

→ स्किनर का क्रिया-प्रसूत अनुबन्धन सिद्धान्त (क्रिया-प्रसूत अनुबन्धन, अमेरिका कार्यात्मक अनुबन्धन सिद्धान्त, नैमित्तिक अनुबन्धन सिद्धान्त, सक्रिय-अनुकूलित अनुक्रिया सिद्धान्त, पुनर्बलन सिद्धान्त)

→ प्रयोग -

Scanned with CamScanner

→ स्किनर प्रयोग के निष्कर्ष-

① क्रिया करने के लिए किसी उद्दीपक का होना जरूरी नहीं होता जैसा कि थार्नडाइक एवं पावलोव ने समझा था। क्रिया प्राणी की जैविक संरचना का एक अंग है, जब कोई जैविक या पर्यावरणीय आवश्यकता जिसे मनोवैज्ञानिक भाषा में प्रेरक एवं अभिप्रेरक कहते हैं, होती है तो प्राणी स्वतः क्रियाशील हो जाता है।

② क्रिया के परिणाम स्वरूप प्राप्त सफलता से सीखने वाले को पुनर्बलन मिलता है। जिसके आधार पर वह भविष्य में भी अपनी क्रियाएं करता है।

③ पुनर्बलन से सीखने की क्रिया तीव्र होती है और सीखने वाला अतिशीघ्र सीख जाता है।

④ क्रिया और पुनर्बलन के परिणाम स्वरूप होने वाला अनुबन्धन ही क्रियाप्रसूत अथवा सक्रिय अनुबन्धन है, क्योंकि यह उद्दीपक के द्वारा नहीं वरन् क्रिया के द्वारा होता है।

⑤ सभी प्राणी प्रायः सक्रिय अनुबन्धन द्वारा ही सिद्धांत सीखते हैं इस प्रकार सीखने को सक्रिय अनुबन्धन सीखना अथवा अधिगम कहते हैं।

→ प्राणी की क्रियाओं के प्रकार- ये दो प्रकार की होती हैं-

① निष्कासित अनुक्रिया - इसका तात्पर्य किसी उद्दीपक के प्रति होने वाली अन्य क्रियाओं से होता है।

② उत्सर्जित अनुक्रिया - इसका तात्पर्य किसी क्रिया के प्रति होने वाली अनुक्रियाओं

Scanned with CamScanner

से होता है। क्रिया के परिणाम स्वरूप उत्पादित होने वाली अनुक्रियाओं को क्रिया प्रसूत कहा जाता है।

→ पुनर्बलन अनुसूची -

① निश्चित अनुपातअनुसूची - इसमें कई निश्चित सही अनुक्रियाओं के पश्चात एक बार पुनर्बलन दिया जाता है। जैसे- 5 क्रियाओं के बाद पुनर्बलन देना है।

② निश्चित अन्तरालअनुसूची - सीखने वाले को एक निश्चित समय के पश्चात एक पुनर्बलन दिया जाता है। इसकी समयावधि एक मिनट से लेकर एक माह तक हो सकती है।

③ शत प्रतिशत अनुसूची - इसमें प्रत्येक सही अनुक्रिया के बाद पुनर्बलन दिया जाता है। इससे प्राणी किसी भी अनुक्रिया को जल्दी सीख लेता है।

④ आंशिक अनुसूची - सही या गलत किसी भी अनुक्रिया के बाद कभी भी अनिश्चित रूप से पुनर्बलन दिया जा सकता है।

→ सक्रिय अनुबन्धन सिद्धान्त की विशेषताएं -

① यह सिद्धान्त क्रिया प्रसूत अनुबन्धन पर बल देता है। क्रिया प्रसूत अनुबन्धन में अनुक्रियाएं प्राणि के द्वारा संचालित होती हैं। इस प्रकार सीखने

Scanned with CamScanner

स्थाई होता है।

② यह सिद्धान्त क्रिया से अधिक, क्रिया के परिणाम को महत्व देता है और सकारात्मक परिणाम से मिलने वाले पुनर्बलन पर बल देता है जो सीखने वाले क्रिया को गति प्रदान करता है।

③ यह सिद्धान्त सफलता पर बल देता है चूंकि सफलता से ही पुनर्बलन मिलता है।

④ यह सीखने की क्रिया में अभ्यास पर बल देता है और अभ्यास से सीखना स्थाई होता है।

⑤ इससे प्रतिभाशाली बच्चों के साथ मन्दबुद्धि के बच्चों को भी आसानी से सिखाया जा सकता है।

→ कमियाँ या दोष -

① यह सिद्धान्त पशुपक्षियों पर प्रयोग करके प्रतिपादित किया गया है यह उनके प्रशिक्षण के लिए अधिक उपयोगी है। यह मनुष्य के सीखने की प्रक्रिया को उचित प्रकार से प्रस्तुत नहीं करता।

② यह सिद्धान्त मन्दबुद्धि अथवा बुद्धिहीन वाले प्राणियों पर को ज्यादा लागू होता है। बुद्धि, चिन्तन एवं तर्क का इसमें कोई महत्व नहीं।

③ स्किनर ने पुनर्बलन को शक्तिदाता माना है जबकि मनुष्य के सीखने में उद्देश्य प्राप्ति की लगन ज्यादा शक्तिशाली होती है।

Scanned with CamScanner

④ इसके अनुसार सीखना यांत्रिक होता है। इसमें बुद्धि की आवश्यकता अधिक नहीं होती है जबकि मनुष्य की सीखने की प्रक्रिया में बुद्धि, चिन्तन, तर्क एवं विवेक की आवश्यकता होती है।

* शिक्षा में उपयोगिता -

① इसके अनुसरण से माता-पिता तथा अध्यापकों के द्वारा बालकों में वांछित व्यवहार को विकसित किया जा सकता है।
② सीखने के लिए उत्प्रेरक के साथ पर प्रेरणा को महत्व देते हैं।
③ इसमें अच्छे कार्य सफलता या वांछित व्यवहार के तुरन्त बाद पुनर्बलन देने पर बल दिया जाता है।
④ शिक्षार्थियों की सफलता के लिए उन्हें क्रियाशील रखने पर जोर दिया जाता है।
⑤ इसी सिद्धान्त के आधार पर अभिक्रमित अनुदेशन का विकास किया गया, जो सीखने में सहायक है।
⑥ इसमें नयी बातें सीखाते समय, सीखने वाले की आवश्यकताओं पर ध्यान दिया जाता है।
⑦ शिक्षण कार्य करते समय शिक्षण के उद्देश्य तथा महत्व को स्पष्ट करके बातों को सीखने के लिए प्रेरित करना चाहिए।
⑧ गणित में पहाड़े, तथा भाषा में वर्तनी याद कराते समय इस सिद्धान्त का प्रयोग करना चाहिए।
⑨ इस सिद्धान्त में किये गये कार्य के परिणाम की जानकारी यथा शीघ्र देने पर बल दिया जाता

Scanned with CamScanner

है।

⑩ इससे समस्यात्मक बालकों में वांछित परिवर्तन किया जा सकता है। शर्मीले बच्चों की झिझक दूर की जा सकती है और कम बुद्धि वाले बालों को पढ़ाया व सीखाया जा सकता है।

✱ शास्त्रीय अनुबन्धन व सक्रिय अनुबन्धन में अन्तर-

शास्त्रीय अनुबन्धन पावलॉव	सक्रीय अनुबन्धन स्किनर
① प्राणी उद्दीपक के उपस्थित होने पर भी क्रिया करता है।	① प्राणी स्वंय से क्रियाशील होता है, किसी उद्दीपक की आवश्यक्ता नहीं होती।
② प्राणी को अनुक्रिया करने के लिए वाध्य किया जाता है।	② प्राणी अपनी इच्छा से अनुक्रिया करता है।
③ इसमें पुनर्वलन उद्दीपक के साथ सम्बद्ध होता है।	③ पुनर्वलन अनुक्रिया के साथ होता है।
④ अनुबन्धित उद्दीपक (C.S) प्राणी को कुछ ही समय तक क्रियाशील रखता है।	④ सक्रीय अनुबन्धन में प्राणी सदैव क्रियाशील रहता है।
⑤ इसमें स्वाभाविक अनुक्रिया (U.C.R) और अनुबन्धित अनुक्रिया (C.R) एक ही होती है। (जैसे - कुत्ते की लार का निकलना।)	⑤ इसमें अनुक्रियाएं अलग-अलग होती हैं जैसे - चुहे का उछलना-कूदना खाना-खाने से भिन्न है।
⑥ इसे S-प्रकार (Type-S) अनुबन्धन भी कहा जाता है।	⑥ इसे R-प्रकार अनुबन्धन कहा जाता है।

(Type-S)

Scanned with CamScanner

⑦ यह अनुक्रियात्मक व्यवहार को सीखने में सहायता प्रदान करता है।

⑦ यह क्रिया-प्रसूत अनुबंधन को सीखने में सहायता प्रदान करता है।

[Wolfgang Kohler]

⑧ कोहलर का सूझ सिद्धान्त- (German Psychologist) (गेस्टाल्ट सिद्धान्त, पूर्णाकार, समग्र आकृति सीखने का क्षेत्रीय सिद्धान्त, insight theory, अन्तरदृष्टि सिद्धान्त): insight

उपरोक्त सिद्धान्त का प्रतिपादन गैस्टाल्टवादियों ने किया था इसीलिए इसे गैस्टाल्ट सिद्धान्त भी कहते हैं।

यह सिद्धान्त एक जर्मन स्कूल की देन है। जिसकी स्थापना 1920 में हुई थी। इस स्कूल से सम्बन्धित व्यक्ति मैक्स वर्दीमर, कोहलर तथा कोफ्का थे। वर्दीमर इस सिद्धान्त के प्रतिपादक तथा अन्य इस सिद्धान्त को आगे बढ़ाने वाले व्यक्ति रहे हैं।

गैस्टाल्ट किसी व्यक्ति या स्थान का नाम नहीं है। ये जर्मन भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है- आकार, संरचना अथवा प्रतिरूप। यहाँ पर इसका अर्थ समग्र आकृति या पूर्णाकार लिया जाता है। इसके मनोवैज्ञानिकों के अनुसार सम्पूर्ण से कुछ भिन्न होता है, जिसे वह मिलकर बना होता है। इसके अनुसार व्यक्ति किसी वस्तु को आंशिक रूप से नहीं बल्कि पूर्ण रूप से सीखता है। इस सिद्धान्त का अर्थ, इस सिद्धान्त के अनुसार प्राणी जो कुछ भी देखते या सुनते या अनुभव करते हैं उसकी एक पूर्ण आकृति बना लेते हैं। व्यक्ति जब किसी नवीन परिस्थिति में आता है, तो वह उस परिस्थिति

Scanned with CamScanner

था समस्या के विभिन्न अंगों में पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करता है। फिर सम्पूर्ण परिस्थिति को समझ कर उसी के अनुसार प्रतिक्रिया करता है। परिस्थिति को ठीक से समझना ही उसकी सूझ है। जब किसी समस्या का हल सरलता से नहीं निकलता तब उसका हल सूझ द्वारा ही निकाला जाता है।

सूझ में व्यक्ति हाथ-पैरों की अपेक्षा चिन्तन, तर्क तथा कल्पना शक्ति से अधिक काम लेता है। सम्पूर्ण परिस्थिति को समझना और फिर व्यवहार करना अन्तर्दृष्टि या सूझता परिचालक है। इस प्रकार सूझ में व्यक्ति का व्यवहार ध्येय निर्देशित होता है। वह अन्धा-धुन्ध व्यवहार नहीं करता। वास्तव में अन्तर्दृष्टि तब पैदा होती है, जब सीखने वाला कार्य में छिपे - सम्बन्ध सौन्दर्य को देख लाता है। इससे आकार 'आह अनुभव' भी कहा जाता है।

→ प्रयोग -

गेस्टाल्ट

↓ जर्मन

आकार, संरचना

→ सिद्धान्त के नियम -

① सरसनात्मकता / संरचनात्मकता - इस सिद्धान्त में अधिगम की सम्पूर्ण प्रक्रिया उस समय पूर्ण मानी जाती है, जब किसी प्रक्रिया का निश्चित रूप प्रकट हो।

② समरूपता - जो वस्तुएं आकार में समान होती हैं उसका पूर्णाकार रूप उसी प्रकार से अन्तर्दृष्टि में होता है।

③ समीपता - जो वस्तुएं आकार में एक दूसरे के समीप दूरी में वे एक समूह के रूप में प्रकट हो जाती हैं।

④ समापन - मस्तिष्क में विस्तृत स्थित क्षेत्र को बन्द करने की प्रक्रिया इसमें आती है। अभाव अर्थात् एक ही समय पर एक ही समस्या पर ध्यान (देने), की प्रक्रिया।

⑤ निरन्तरता - इसके अन्तर्गत व्यक्ति अपने सामने उपस्थित वस्तुओं से प्रत्यक्षी करण कर सम्बन्ध बनाती हैं।

→ सिद्धान्त की विशेषताएं -

① अचानक से होती है।
② समस्या परिस्थिति पर निर्भर।
③ बुद्धि से कार्य।
④ अनुभव के साथ बढ़ना।

Scanned with CamScanner

⑤ मूल रूप में प्रयास व त्रुटि ही।
⑥ पूर्ण रूप से प्रत्यक्षीकरण आवश्यक।
⑦ पुनरावृत्ति से सरल होना।
⑧ नवीन परिस्थितियों पर लागू होना।
⑨ पूर्व अनुभव सहायक।
⑩ स्पष्ट व स्थाई सीखना।
⑪ पूर्ण से अंश की ओर।
⑫ समस्या समाधान पर बल।

→ सिद्धान्त की कमियाँ-

① प्रत्येक प्रकार का अधिगम नहीं।
② पशुओं व बच्चों पर लागू नहीं।
③ स्वंय में पूर्ण नहीं।
④ आयु, क्षमता, वंशानुक्रम, विभिन्नता आदि का प्रभाव।
⑤ परिस्थितियाँ अनुकूल होनी चाहिए।

→ शैक्षिक महत्व-

① बौद्धिक विकास होने पर सीखना।
② पाठ्यक्रम निर्माण।
③ व्यक्तित्व को समझना आवश्यक।
④ समस्या का पूरा ज्ञान होना।
⑤ जिज्ञासा उत्पन्न करना।
⑥ योग्यताओं को मापना।
⑦ पूर्ण से अंश की ओर।
⑧ पूर्व अनुभवों का ध्यान।
⑨ समस्या समाधान विधि।
⑩ रचनात्मक कार्यों में उपयोगी।

Scanned with CamScanner

$S_1 \rightarrow R_2$, R_3 ; $R_1 \rightarrow S_2$, S_2 ; $S_1 \dots R_1$, R_3

* प्रयास व त्रुटि अनुबन्धन एवं अन्तर्दृष्टि सिद्धान्तों की तुलना -

① 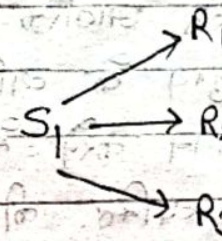

→ प्रयास व त्रुटि सिद्धान्त
→ थार्नडाइक

② 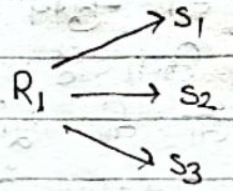

→ अनुबन्धन सिद्धान्त
→ पावलोव

③ 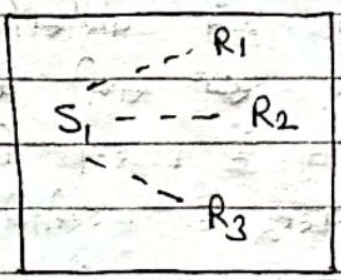

→ अन्तर्दृष्टि का सिद्धान्त
→ कोहलर या गैस्टाल्ट गैस्टाल्ट

① इसमें एक उद्दीपक मिलता है, जिसके फलस्वरूप कई प्रतिक्रियाएं करने के बाद इसमें एक सही प्रक्रिया का चयन होता है (बिल्ली की सभी क्रियाएं)

② इसमें एक प्रतिक्रिया की जाती है, जो कई उद्दीपकों (लार, भोजन, घण्टी आदि) की आवश्यकता होती है।

③ यह प्रयास एवं त्रुटि सिद्धान्त के समान ही है सीखने वाला सम्पूर्ण परिस्थितियों की समस्या को समझता है। समस्या के कई हल सोचे जाते हैं, फिर प्रतिक्रिया की जाती है कोई भी प्रतिक्रिया पहले की जा सकती है।

Scanned with CamScanner

V. Imp. [American Psychologist]

⊛ मैसलो का मानवतावादी सिद्धान्त (अभिप्रेरणा सिद्धान्त)

(Abraham Harold Maslow) मैसलो (ए॰ एच॰ मैसलो) A.H. ने इस बात का विरोध किया कि मनुष्य का व्यवहार आंतरिक एवं बाह्य उद्दीपकों पर निर्भर करता है। मनुष्य के व्यक्तित्व निर्माण की प्रक्रिया का बारीकी से अध्ययन करने के बाद वह इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि व्यक्ति की आन्तरिक शक्तियाँ ही उसके लिए अभिप्रेरकों का कार्य करती हैं। उन्होंने इन अभिप्रेरकों को मनुष्य की आवश्यकताओं के रूप में प्रस्तुत किया है। मैसलो के अनुसार व्यक्ति इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सम्बन्धित सामग्री एवं साधन जुटाता है। अनुकूलन, प्रतिकूलन, वस्तु, तथ्य, क्रिया एवं परिस्थिति आदि की व्याख्या करता है और इन सभी को एक व्यवस्थित रूप में प्रयोग करता है। इस सिद्धान्त में अभिप्रेरणा सबसे महत्वपूर्ण पहलू है। इसीलिए इसे अभिप्रेरणा का सिद्धान्त भी कहा जाता है। मैसलो ने इन आवश्यकताओं को वर्गीकृत इन्हें एक उतार क्रम दिया है जिसे आरोही पद (सोपान) भी कहा जाता है। इस सोपान में मानवीय प्रेरक एक क्रम के रूप में व्यवस्थित होते हैं तथा संख्या में 5 होते हैं। जिस समय विशेष में जो प्रेरक सबसे अधिक उत्तेजना रखता है, वह पूरे व्यवहार पर हावी जाता है। इस प्रेरक के शान्त होने पर दूसरी श्रेणी का प्रेरक जाग्रत होता है। और फिर वह हमारे पूरे व्यवहार पर हावी जाता है। इस प्रकार यह क्रम चलता रहता है और सबसे अन्त में 5वाँ प्रेरक प्रभावी होता है।

Scanned with CamScanner

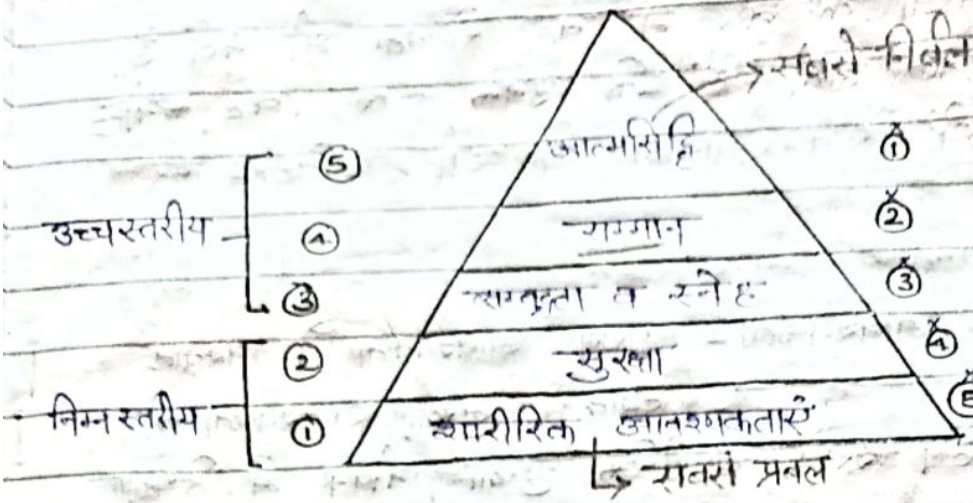

प्रथम दो माँगें शारीरिक आवश्यकाएं एवं सुरक्षा को निम्न स्तरीय एवं उपरोक्त तीन मांगें अर्थात् सम्बद्धता, स्नेह, सम्मान तथा आत्मसिद्धि को उच्च स्तरीय माँग के नाम से भी जाना जाता है। इसमें जो माँग जितने नीचे है उसकी उतनी ही अधिक प्राथमिकता है। निचले स्तर की माँग के पूर्णतः एवं आंशिक रूप से पूरी होने पर भी उससे ऊपर की माँगें क्रियाशील होती हैं। दैहिक मांग सबसे अधिक प्रबल व स्वयं सिद्धि या आत्म सिद्धि की माँग सबसे निर्बल होती है।

मैसलो के अनुसार प्रायः दैहिक माँगों की संतुष्टि 85%, सुरक्षा माँगों की 70%, सम्बद्धता एवं स्नेह की 50%, सम्मान की 40% तथा आत्मसिद्धि की माँगें केवल 10% ही पूरी हो पाती हैं।

① शारीरिक आवश्यकतायें - मैसलो के अनुसार ये आवश्यकतायें व्यक्ति की मूलभूत एवं सबसे अधिक महत्वपूर्ण आवश्यकतायें होती हैं। इनमें भोजन, पानी, आराम एवं यौन सम्बन्धी आवश्यकतायें आती हैं। व्यक्ति कभी-२ इनको पूरा करने में

Scanned with CamScanner

अपनी जिन्दगी व्यतीत कर देता है। इनकी पूर्ति के बिना अन्य आवश्यकताओं के बारे में वह सोचता भी नहीं है। ये इतनी प्रबल होती हैं कि इनके कारण वह कभी-कभी सामाजिक मूल्यों एवं मानकों की भी अवहेलना कर देता है।

② सुरक्षा की आवश्यकता- प्रथम आवश्यकता के पश्चात व्यक्ति सुरक्षा आवश्यकता की ओर बढ़ता है। इसमें शारीरिक सुरक्षा, जीवन में स्थिरता, निर्भरता, बचाव, भय, चिन्ता आदि आते हैं। मनुष्य इनकी प्राप्ति की साधन सामग्री पर विचार करता है और उन्हे जुटाने के लिए हर सम्भव प्रयास करता है। नियम-कानून का निर्माण का निर्माण व पालन इसी में आता है।

③ सम्बद्धता व स्नेह की आवश्यकता- यह व्यक्ति को परिवार में समाज में प्रतिष्ठा व सम्मान प्राप्त करने के लिए प्रेरित करती है। वह समाज से प्रेम, स्नेह एवं सहानुभूति की अपेक्षा करता है। समाज के अन्य लोगों से मधुर सम्बन्ध कायम करता है। वह जीवन का सत्य इसी को मानता है कि व्यक्ति किसी का हो जाये या किसी को अपना बना ले। सम्बद्धता व स्नेह न मिलने पर व्यक्ति कुसमायोजन में फँस सकता है।

④ सम्मान की आवश्यकता- प्रथम तीन आवश्यकताओं को पूरा करने के बाद व्यक्ति समाज में मधुर सम्बन्धों के साथ-साथ अपना अहम् तथा आत्म सम्मान भी प्राप्त करना

Scanned with CamScanner

चाहता है। अपमान की जिन्दगी का एक क्षण भी वह बरदाश्त नहीं कर सकता। आत्म सम्मान पाने के लिए वह अपनी स्वयं की योग्यता एवं क्षमता की पहचान करता है। आत्म विश्वास उपलब्धि, स्वतन्त्रता आदि की भावनाएं विकसित करता है। इसमें व्यक्ति क्रान्ति ग्रहण करना चाहता है, नेतृत्व करना चाहता है। इसके परिणाम स्वरूप वह स्वयं को योग्य बनाये रखना चाहता है और समाज के लिए उत्पादक कार्य करना चाहता है।

⑤ आत्मसिद्धि की आवश्यकता - इस स्तर को व्यक्ति तभी प्राप्त करना चाहता है, जब प्रथम चार आवश्यकताएं पूरी हो चुकी हों। इसमें व्यक्ति समाज के हित में योगदान करना चाहता है ताकि लोग उसे मरने के बाद भी याद रखें। यह योगदान आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक या आध्यात्मिक किसी भी रूप में हो सकता है। वह समाज का पथ प्रदर्शक बनना चाहते है।

मैसलो के अनुसार- "एक संगीतज्ञ को संगीत प्रस्तुत करना चाहिए, कलाकार को चित्रकारी करनी चाहिए तथा कवि को कविता लिखनी चाहिए; यदि वह आत्मसंतुष्टि चाहता है तो। अर्थात् एक व्यक्ति को वही होना चाहिए, जो वह हो सकता है।"

निष्कर्ष- ये सभी पाँचों एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। एक के अभाव में इसरे का कोई औचित्य नहीं है। ये व्यक्ति को लक्ष्य की ओर अग्रसरित करने में सहायक होते हैं।

Scanned with CamScanner

* मैसेलो के सिद्धान्त की विशेषताएं -

① आवश्यकताएं अभिप्रेरक का कार्य करती है।
② आवश्यकताओं की पूर्ति एक विशेष क्रम में होती है।
③ आवश्यकताएं निम्न एवं उच्च स्तर की होती हैं।
④ आवश्यकताओं की क्रम पूर्णता पर सम्पूर्ण व्यक्तित्व की प्राप्ति होती है।
⑤ अन्तः शक्तियों को समझना आवश्यक होता है

→ कमियाँ -

① यह सिद्धान्त वैज्ञानिक नहीं है क्योंकि इसमें केवल (अनुभव) प्रेक्ष्य को शामिल किया गया था।
② कुछ तथ्य दोनों स्तरों में शामिल है जैसे भोजन के साथ निर्भरता और निर्भरता के साथ स्नेह।
③ आत्मसिद्धि पर सहमति नहीं है।
④ पूर्व स्तर की पूर्ति के बिना भी सर्वोच्च स्तर प्राप्त हो सकता है।
⑤ इसमें प्रतिस्पर्द्धा, घृणा व द्वेष में परिवर्तित हो जाती है

→ शिक्षा में उपयोगिता - मैसलो का यह सिद्धान्त एक मानवता वादी व्यक्तित्व का सिद्धान्त है यह मनुष्य को एक मशीन नहीं बल्कि जैविक प्राणी मानता है। शिक्षा के क्षेत्र में इसकी उपयोगिता निम्न है -

① आवश्यकताओं के आधार पर पाठ्यक्रम निर्माण

Scanned with CamScanner

Behaviam Function
② पाठ्यक्रम वास्तविक जीवन से सम्बन्ध।
③ अभिप्रेरणा आवश्यक।
④ अधिगम का सम्बन्ध आवश्यकता से जोड़ना।
⑤ चरित्र का निर्माण करना। (सम्मान एवं आत्मसिद्धि)

✱ अन्य सिद्धान्त -

① संरचना संसाधन सिद्धान्त (वृतिक सिद्धान्त) - 'कॉल कोफ्का'

② ज्ञानात्मक { क्षेत्र सिद्धान्त - 'कर्ट लेविन।' (जर्मनी)
{ तलरूप सिद्धान्त (Topological Theory)

③ प्रतिस्थापन सिद्धान्त - 'ई० आर० गुथरी।'

④ प्रबलन का सिद्धान्त - 'हल।'

⑤ मॉडल द्वारा व्यवहार में रूपान्तरण लाने का सिद्धान्त - 'बान्डूरा।'

⑥ प्रयोजन मूलक मनोविज्ञान प्रतीक सीखना - 'टॉलमैन'। (चिन्ह सिद्धान्त)

✱ अधिगम के वक्र एवं प्रकार - सीखने की मात्रा तथा समय (अथवा प्रयास) के परस्पर सम्बन्ध को चित्रांकित करने पर जो वक्र रेखा प्राप्त होती है। उसे अधिगम वक्र रेखा कहा जाता है। अधिगम वक्र से समय के साथ सीखने में होने वाली सफलता का ज्ञान होता है।

Scanned with CamScanner

अधिगम वक्र चार प्रकार के होते हैं-

① सरल रेखीय वक्र - इसे समान उपलब्धि वक्र भी कहा जाता है जब समय के साथ-साथ अधिगम की मात्रा लगातार बढ़ती रहती है तब इस प्रकार प्राप्त वक्र को सरल रेखीय वक्र कहते हैं। परन्तु यह बहुत कम परिस्थितियों में पाया जाता है।

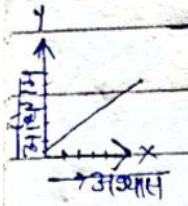

② उन्नतोदर वक्र - इसमें समय अथवा प्रयासों के साथ अधिगम की मात्रा धीरे-धीरे कम होने लगती है तथा अन्त में यह एक क्षैतिज रेखा अथवा पठार के रूप में हो जाता है इसे घटनशील उपलब्धि वक्र या नकारात्मक गति वक्र भी कहा जाता है। प्रायः इसी प्रकार के वक्र प्राप्त होते हैं।

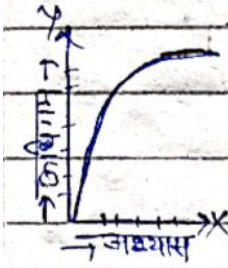

③ नतोदर वक्र - इसमें समय अथवा प्रयासों के साथ अधिगम की मात्रा में अधिक वृद्धि हो जाती है। इसे वर्धनशील उपलब्धि वक्र अथवा सकारात्मक गति वक्र भी कहते हैं।

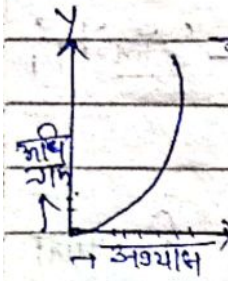

④ मिश्रित निष्पादन वक्र - यह वास्तव में नतोदर व उन्नतोदर का मिला-जुला रूप होता है इसे S- प्रकार वक्र भी कहा जाता है जिसमें अधिगम प्रयासों के प्रारम्भ तथा अन्त में प्रति-प्रयास अधिगम की मात्रा कम होती है।

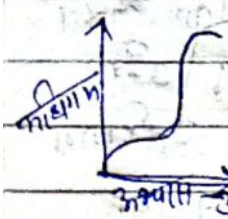

Scanned with CamScanner

जबकि बीच के प्रयासों में अधिगम की मात्रा अधिक होती है।

* मनोवैज्ञानिकों ने अधिगम के विभिन्न वक्रों का सूक्ष्म अध्ययन करके कुछ विशेषताओं की पहचान की, जिस आधार पर अधिगम वक्रों को चार प्रकार के भागों में बाँटा जा सकता है।

① प्रारम्भिक स्फुरण - (त्वरण) - पाठ को सीखने हेतु प्रारम्भ करते समय व्यक्तियों में अभिप्रेरणा व उत्साह अधिक होता है, जिस कारण वह तेजी से सीखता और वक्र तेजी से ऊपर जाता है।

② मध्य स्फुरण (त्वरण) -

③ पठार -

④ अन्तिम स्फुरण (त्वरण) -

Scanned with CamScanner

* सीखने के पठार के कारण -

① शारीरिक क्षमता की सीमा।

② बुद्धि एवं मानसिक क्षमता की सीमा।

③ रुचि एवं अभिप्रेरणा की सीमा।

④ ज्ञान की सीमा।

⑤ शिक्षण विधियाँ।

⑥ सीखने, सीखाने की परिस्थितियाँ।

⑦ सीखे जाने वाली सामग्री।

* पठार को कम करने के उपाय - मनोवैज्ञानिकों ने अपने अध्ययन में पाया है कि किसी भी बच्चे के सीखने के मार्ग में पठार की स्थिति अवश्य आती है उन्हें पूर्ण रूप से समाप्त नहीं किया जा सकता, केवल उसकी अवधि कम की जा सकती है। उनकी संख्या में कमी लाई जा सकती है परन्तु यह सब तभी किया जा सकता है जब इसके लिए उत्तरदायी कारकों को कम किया जाये।

① शारीरिक स्वास्थ्य एवं विश्राम।

② बुद्धि एवं मानसिक क्षमताओं में वृद्धि।

Scanned with CamScanner

③ रुचि एवं अभिप्रेरणा की निरन्तरता।
④ ज्ञान की सीमा का ध्यान।
⑤ उपयुक्त शिक्षण विधियों का प्रयोग।
⑥ सीखने, सीखाने की परिस्थितियों में सुधार।
⑦ पाठ सामग्री तथा क्रिया का पाठ में स्तर।

✱ अधिगम के वक्रों का शिक्षा एवं सीखने में महत्व –

① छात्र के सीखने की गति का ज्ञान।
② शारीरिक एवं मानसिक क्षमता का ज्ञान।
③ प्रारम्भिक स्फुरण की सीमा को बनाये रखना।
④ उचित विधियों का चुनाव।
⑤ पठार की स्थिति के आने के कारणों को दूर करना।
⑥ अन्तिम स्फुरण से लाभ प्राप्त करना।

✱ अभिप्रेरणा – (Motivation): अभिप्रेरणा लैटिन भाषा के Motum शब्द से बना है। जिसका अर्थ होता है – मोटर या प्रणोदन यानि की गति।

अभिप्रेरणा का सामान्य अर्थ होता है किसी कार्य को करने के लिए प्रोत्साहित होना। इसके दो रूप पाये जाते हैं

(i) प्रक्रिया और (ii) परिणाम।

वास्तव में यह एक आन्तरिक शान्ति होती है जो प्राणी को किसी विशिष्ट कार्य करने को प्रोत्साहित करती है, इसे प्रत्यक्ष रूप में देखा नहीं जा सकता। यह एक अदृश्य शक्ति होती है जिसके प्रभावों का निरीक्षण करना ही सम्भव हो पाता है, इसे सीखने का हृदय,

Scanned with CamScanner

सीखने की सुनहरी सड़क, अनिवार्य स्थिति और सीखने का प्रमुख कारक भी कहा जाता है। क्योंकि सारा सीखना इसी के कारण होता है अतः ये सीखने का एक आवश्यक तत्व है। अभिप्रेरणा वास्तव में 'क्यों' शब्द का उत्तर देती है।

→ परिभाषाएं -

① गुड (Good) - अभिप्रेरणा किसी कार्य को प्रारम्भ करने, जारी रखने अथवा नियन्त्रित करने की प्रक्रिया है।

* अभिप्रेरक - (Motive) - व्यक्ति में किसी कार्य विशेष को करने के प्रति अभिप्रेरणा उत्पन्न करने वाले कारकों को अभिप्रेरक कहते हैं जो कि दो प्रकार के होते हैं -
(i) आन्तरिक अभिप्रेरक (भूख, प्यास आदि)
(ii) वाह्य अभिप्रेरक (आत्मसम्मान, शिक्षा, धन)

अभिप्रेरक व्यक्ति की वे आन्तरिक एवं वाह्य दशाएं हैं जो उसे कार्य विशेष के सम्पादन के लिए अभिप्रेरित करती है और उद्देश्य की प्राप्ति तक क्रियाशील रखती है।

→ अभिप्रेरकों के प्रकार -

(i) जन्मजात अभिप्रेरक (भूख, प्यास, नींद आदि)
(ii) अर्जित अभिप्रेरक (सामाजिक प्रतिष्ठान, रुचि आदि)
(iii) स्वाभाविक अभिप्रेरक (खेलना, व्यायाम करना, सुख प्राप्त करना)

Scanned with CamScanner

(iv) कृतिम अभिप्रेरक (पुरस्कार, दण्ड, प्रशंसा)
(v) जैविक " (क्रोध, भय, प्रेम)
(vi) मनोवैज्ञानिक " (अहंकारात्मकता, पलायन, जिज्ञासा।)
(vii) सामाजिक " (सुरक्षा, संग्रह, स्थिति)
(viii) प्राथमिक " (भोजन, यौन क्रियाएं)
(ix) द्वितीयक " (प्रतिष्ठा, स्वीकृति, जिज्ञासा)

→ अभिप्रेरणा की प्रकृति -

① यह प्रक्रिया व परिणाम दोनों है।
② इसका जन्म आवश्यकता से होता है।
③ यह भावात्मक उत्तेजना की स्थिति होती है।
④ उद्देश्य की प्राप्ति तक क्रियाशील रखती है।
⑤ रुचि के अभाव में भी क्रियाशील रखती है।
⑥ अभिप्रेरणा उत्पन्न करने वाले कारकों को अभिप्रेरक कहा जाता है।
⑦ अभिप्रेरक चाहे आन्तरिक हो या बाह्य किन्तु
⑧ अभिप्रेरणा सदैव आन्तरिक होती है।

→ अभिप्रेरणा के संघटक (Components of motivation) -

① आवश्यकता।
② अन्तर्नोद।
③ क्रिया।
④ प्रोत्साहन। (incentive)

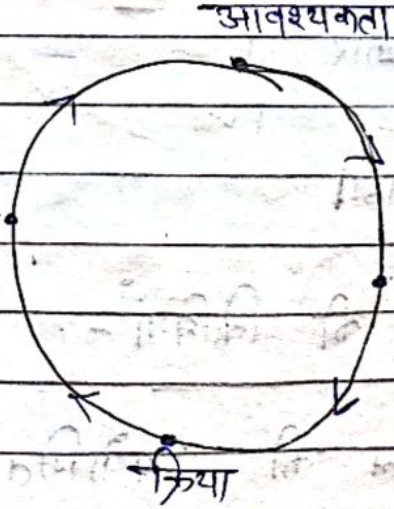

Scanned with CamScanner

→ (*) अभिप्रेरणा के प्रकार -

① प्राकृतिक या अन्तर्निहित अभिप्रेरणा (प्राथमिक)	② बनावटी या बाह्यरी अभिप्रेरणा (द्वितीयक)
① शारीरिक अभिप्रेरणा	① लक्ष्य अभिप्रेरणा
② स्वाभाविक "	② सहयोग "
③ संवेगात्मक "	③ परिणाम का ज्ञान "
④ सामाजिक "	④ पुरस्कार "
⑤ निजी या व्यक्तिगत अभिप्रेरणा	⑤ मनोरंजनपूर्ण क्रियाएं
⑥ क्रीड़ा या खेल "	
⑦ अनुकरण "	

(*) सीखने में अभिप्रेरणा -

① सीखने की इच्छा ।
② सीखने में क्रियाशीलता ।
③ आकांक्षा स्तर ।
④ प्रतियोगिता ।
⑤ सफलता का ज्ञान ।
⑥ प्रशंसा ।
⑦ निन्दा ।
⑧ पुरस्कार ।
⑨ दण्ड ।
⑩ प्रतिष्ठा ।

→ अभिप्रेरणा की विधियाँ -

① कौशल की उपयोगिता ।

Scanned with CamScanner

② शिक्षार्थियों की आवश्यकताएं ।
③ शिक्षार्थियों का आकांक्षा स्तर ।
④ कक्षा का वातावरण ।
⑤ उपयुक्त शिक्षण विधियों का प्रयोग ।
⑥ शिक्षक का व्यवहार ।
⑦ प्रशंसा एवं निन्दा ।
⑧ पुरस्कार एवं दण्ड ।
⑨ प्रतिद्वन्द्वता एवं प्रतियोगिता ।
⑩ सफलता का ज्ञान ।
⑪ अवधान एवं रुचि ।
⑫ नवीनता ।
⑬ प्रगति का ज्ञान ।
⑭ आवश्यकता का ज्ञान ।

Scanned with CamScanner

बुद्धि (Intelligence)

बुद्धि का अर्थ चतुराई से लिया जाता है। जो व्यक्ति जितनी अधिक चतुराई या कुशलतापूर्वक समस्या का समाधान निकाल लेता है व संकट में नहीं पड़ता है वह उतना ही बुद्धिमान माना जाता है। इस प्रकार कुशलतापूर्वक कार्य करने की क्षमता ही बुद्धि कहलाती है।

संसार के प्रत्येक व्यक्ति में बुद्धि होती है। इसकी मात्रा अलग-अलग हो सकती है। यह जन्मजात होती है जो उचित वातावरण में परिपक्वता को प्राप्त करती है।

बुद्धि के अध्ययन को तीन पक्षों में बांटा जा सकता है -

i) कार्यात्मक पक्ष - इसमें बुद्धि व इसके कार्यों का अध्ययन किया जाता है।

ii) संरचनात्मक पक्ष - इसमें बुद्धि की संरचना, सिद्धान्त व कारकों का अध्ययन किया जाता है।

iii) क्रियात्मक पक्ष - इसमें बुद्धि का मापन, तकनीकें व परीक्षण किया जाता है।

⇒ बुद्धि की प्रकृति

मनोवैज्ञानिक फ्रीमेन ने बुद्धि को चार वर्गों में बांटा है -

i) बुद्धि सीखने की योग्यता है।

ii) बुद्धि पर्यावरण के साथ समायोजन की योग्यता है।

iii) बुद्धि अमूर्त चिन्तन की योग्यता है।

iv) बुद्धि अनेक योग्यताओं का समुच्चय है।

Scanned with CamScanner

परिभाषाएं

(1) वोलेन्सिक - "बुद्धि कोई एक प्रकार की शक्ति, क्षमता अथवा योग्यता नहीं है जो सब परिस्थितियों में समान रूप से कार्य करती है अपितु यह विभिन्न योग्यताओं का योग है।"

(2) बुद्धि व्यक्ति की उद्देश्यपूर्ण ढंग से कार्य करने, विवेकपूर्ण ढंग से चिन्तन करने और अपने पर्यावरण के साथ प्रभावशाली ढंग से सामंजस्य करने की सम्पूर्ण अथवा व्यापक योग्यता है। — वैश्लर

⇒ बुद्धि क्या नहीं है?

1) बुद्धि ज्ञान नहीं है।
2) यह प्रतिभा भी नहीं है।
3) यह स्मृति भी नहीं है।
4) यह कौशल भी नहीं है।

⇒ बुद्धि की विशेषताएं

1) यह एक जन्मजात शक्ति होती है।
2) यह ज्ञान अर्जन की शक्ति होती है।
3) यह सीखने या अनुभव से लाभ उठाने की शक्ति होती है।
4) यह विभिन्न संबंधों को समझने की शक्ति है।
5) यह समस्या का समाधान करने की शक्ति है।
6) यह अच्छे-बुरे, नैतिक-अनैतिक में अन्तर की शक्ति है।
7) वातावरण से सामंजस्य करने की शक्ति है।
8) यह चिन्तन, तर्क और निर्णय करने की शक्ति है।
9) यह ध्येययुक्त कार्य करने की शक्ति है।
10) यह अमूर्त चिन्तन की योग्यता है।
11) प्रत्येक व्यक्ति में इसकी मात्रा अलग-अलग होती है।
12) इसका विकास जन्म से किशोरावस्था तक होता है।
13) लिंग भिन्नता के कारण बुद्धि में अंतर नहीं होता है।
14) यह अनेक योग्यताओं का समुच्चय है।

Scanned with CamScanner

⇒ बुद्धि का विकास

पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक के अनुसार बुद्धि जन्मजात होती है, यह वंशानुक्रमीय पित्रैकों पर आधारित होती है। अर्थात् बच्चे के माता-पिता के संसर्ग के समय उनके गुण सूत्रों के जिन पित्रैकों का संयोग होता है, उनके द्वारा निर्धारित होती है। जिस प्रकार पित्रैकों पर आधारित मनुष्य की लम्बाई पूर्ण विकास किशोर काल के अन्त तक हो पाता है उसी प्रकार बुद्धि का विकास भी किशोर काल के अन्त तक पूरा हो पाता है। Page→१३८१३५

* बुद्धि के प्रकार- बुद्धि तीन प्रकार की होती है-

(1) मूर्त बुद्धि / यान्त्रिक / गत्यात्मक बुद्धि।
(2) अमूर्त बुद्धि (चिन्तन-मनन)
(3) सामाजिक बुद्धि (समायोजन)

Imp.
* बुद्धि के सिद्धान्त- बुद्धि का स्वरूप क्या है, यह कैसे कार्य करती है, इस सम्बन्ध में विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने अपने प्रयोगों के आधार पर विभिन्न प्रकार के निष्कर्ष निकाले जिन्हें 'बुद्धि के सिद्धान्त' कहा जाता है।

बुद्धि के सिद्धान्त से अभिप्राय उसकी प्रकृति तथा संरचना के क्रमबद्ध स्पष्टीकरण से है। इसमें बुद्धि के तथ्यों या कारकों की खोज कर उसकी जटिल प्रक्रिया को समझा गया। इसे दो वर्गों में बाँटा गया है-

(1) पिण्डक- इसमें बुद्धि एक पिण्ड के रूप में कार्य करती है।

(2) विभाजक- इसमें बुद्धि को विभिन्न प्रकार की

Scanned with CamScanner

योग्यताओं में बाँटा गया है। इसके कुछ प्रमुख सिद्धान्त निम्नवत् हैं-

(i) बुद्धि का एक कारक सिद्धान्त - यह एक प्राचीन सिद्धान्त है। यह बुद्धि मापन परीक्षण से 35 वर्षों तक प्रचलित रहा। इसके अनुसार बुद्धि एक अविभाज्य इकाई है। इससे समस्त मानसिक क्रियाएं संचालित होती हैं। बिने, टर्मन, व स्टर्न इसके प्रबल समर्थक थे।

(ii) बुद्धि का द्विकारक सिद्धान्त - इस सिद्धान्त का प्रतिपादन 'स्पीयरमैन' द्वारा किया गया था। उसके अनुसार बुद्धि में दो कारक होते हैं - एक जी (ज) कारक → General ability और दूसरा (S) कारक → special ability.

इसमें ज कारक हमेशा स्थाई होता है। लेकिन s कारक में कार्य के अनुसार अन्तर पाया जाता है। विभिन्न प्रकार के व्यक्तियों में ज व s दोनों कारकों में विभिन्नता पायी जाती है। किसी भी कार्य को करने में ये दोनों कारक सम्मिलित होते हैं।

(A) ज कारक की विशेषताएं -

(1) सर्वव्यापी योग्यता।
(2) जन्मजात योग्यता।
(3) सामान्य मानसिक योग्यता।
(4) सामान्य " शक्ति।
(5) प्रत्येक क्रिया में प्रयोग।
(6) स्थाई व्यक्ति-2 में विभिन्नता।
(7) अधिगम का प्रभाव नहीं।

Scanned with CamScanner

⑧ सफलता के लिए तैयारी।
⑨ सफलता की सीमा।

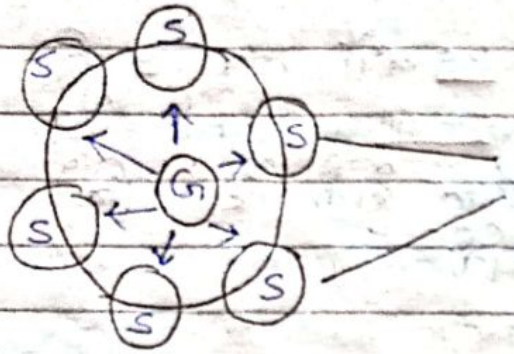

सामान्य एवं विशिष्ट योग्यता में सम्बन्ध

⑤. S-कारक की विशेषताएं-

1. विशेष योग्यता।
2. विशिष्ट क्रियाएं।
3. सीखा गया कारक।
4. क्रिया-क्रिया में अन्तर।
5. व्यक्ति-व्यक्ति में अन्तर।
6. बहुत सारे S कारक।
7. विशिष्ट मानसिक शक्ति।
8. विशेष क्षेत्र में सफलता।
9. सफलता की मात्रा।

⑥ तृतीय कारक - विभिन्न प्रकार की आलोचनाओं के बाद स्पीयर मैन ने एक और कारक इसमें जोड़ दिया जिसे उसने 'समूह कारक' का नाम दिया।

यह समूह कारक G कारक से कम सामान्य, विस्तृत और समरूप होते हैं। और S-कारक से अधिक विस्तृत, सामान्य और समरूप होते हैं

Scanned with CamScanner

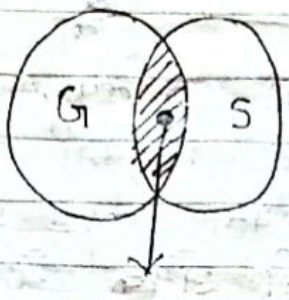

समूह कारक

(iii) बहुकारक सिद्धान्त (थॉर्नडाइक)- थॉर्नडाइक के अनुसार बुद्धि में सामान्य योग्यता (ज-कारक) जैसा कोई तत्व नहीं होता है। बुद्धि तो अनेक विशेष प्रकार के तत्वों का योग है और किसी भी कार्य को करने के लिए विभिन्न प्रकार के तत्व एक साथ मिलकर कार्य करते हैं। जहाँ पर S-R सम्बन्ध अच्छी प्रकार से स्थापित हो जाता है व्यक्ति उन कार्यों को अच्छी तरह से कर लेता है और जहाँ पर यह सम्बन्ध नहीं बन पाता है तो व्यक्ति उन कार्यों को करने में त्रुटि करता है। यह कहना भी आवश्यक होगा कि अगर एक व्यक्ति कोई कार्य अच्छी प्रकार से कर लेता है तो यह आवश्यक नहीं है कि वह इसरे कार्यों को भी अच्छी प्रकार से कर सके।

इस सिद्धान्त के अनुसार बुद्धि अनेक स्वतन्त्र कारकों से मिलकर बनी है। किसी भी मानसिक कार्य को करने के लिए ऐसे अनेक छोटे-2 कारक साथ मिलकर सहायता करते हैं।

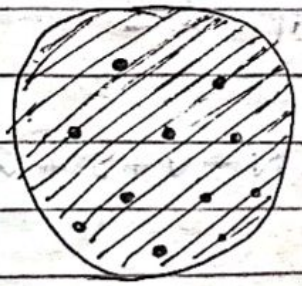

Scanned with CamScanner

बुद्धि का समूह कारक सिद्धान्त – शिकागो विश्वविद्यालय के प्रोफेसर थर्स्टन ने अपनी बुद्धि सिद्धान्त का प्रतिपादन 1938 में किया, जिसके आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि न तो बुद्धि किसी एक योग्यता का प्रतीक है, न दो का, न तीन का और नही अनेक योग्यताओं का समष्टि यह सामूहिक योग्यताओं के अनेक समूह का योग है। प्रत्येक में एक प्राथमिक कारक होता है जो उस समूह का प्रतिनिधित्व करता है जो कि 'प्राथमिक मानसिक योग्यता' कहलाती है। इसी आधार पर इसे थर्स्टन के 'समूह कारक सिद्धान्त' के साथ-साथ 'प्राथमिक मानसिक योग्यताओं का सिद्धान्त' 'कारक विश्लेषण बुद्धि सिद्धान्त' भी कहा जाता है।

इस सिद्धान्त में (7) प्राथमिक कारकों या प्राथमिक मानसिक योग्यताओं की खोज की गई है—

(i) संख्यात्मक योग्यता – (N) N
(ii) शाब्दिक योग्यता – (V) V
(iii) स्थानिक योग्यता – (S) S
(iv) शब्द प्रवाह – (W) W
(v) तार्किक योग्यता – (R) R
(vi) स्मृति योग्यता – (M) M
(vii) प्रत्यक्ष सम्बन्धी योग्यता – (P) P

संक्षेप में इसे निम्न रूप से व्यक्त किया जा सकता है—

बुद्धि = N+V+S+W+R+M+P

Scanned with CamScanner

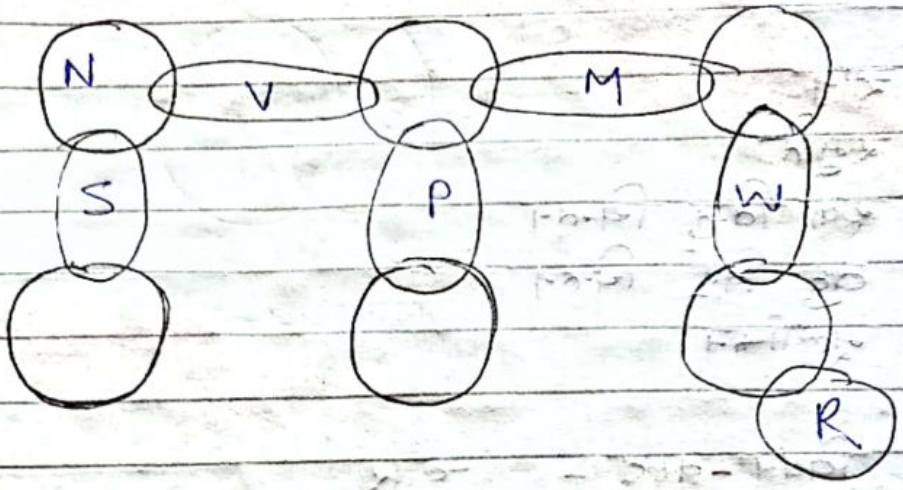

उपरोक्त के अतिरिक्त एक अन्य कारक का भी उल्लेख किया गया है। जिसे 'समस्या समाधान योग्यता' कहा गया है।

थर्स्टन ने इन सात मानसिक योग्यताओं के आधार पर एक बुद्धि परीक्षण भी तैयार किया था जिसे 'प्राथमिक मानसिक योग्यता परीक्षण' कहा जाता है।

⊛ गिलफोर्ड का त्रिविमीय सिद्धान्त – 'बुद्धि की संरचना' SOI

बुद्धि की संरचना जिसे संक्षप्ति रूप में SOI कहते हैं, को U.S.A के दक्षिणी कैलिफोर्निया मनोवैज्ञानिक प्रयोगशाला में डा० जे० पी० गिलफोर्ड व उनके साथियों द्वारा विकसित किया गया। इसके अनुसार बुद्धि मानसिक योग्यताओं के कम से कम तीन आयामों से निर्मित है – क्रियाएं, विषय-वस्तु और उत्पादन। उन्होंने पाँच प्रकार की क्रियाएं, चार प्रकार की विषय-वस्तु और 6 प्रकार के प्रतिपादों की खोज की। इस प्रकार कहा गया कि बुद्धि इन $4 \times 5 \times 6 = 120$ मानसिक योग्यताओं का योग हो सकती है।

Scanned with CamScanner

→ क्रियाएं - क्रियाएं पाँच प्रकार की होती हैं -

① ज्ञान -
② स्मृति -
③ एक विन्दु चिन्तन
④ बहु बिंदु चिन्तन
⑤ मूल्यांकन

→ विषय - वस्तु - चार

① अकारात्मक विषय वस्तु ।
② प्रतिकारात्मक विषय - वस्तु ।
③ शब्दात्मक " - " ।
④ व्यवहारात्मक " " ।

→ उत्पादन - छः

① इकाइयाँ ।
② वर्ग ।
③ सम्बन्ध ।
④ संघटन ।
⑤ परिवर्तन ।
⑥ निहितार्थ ।

इस आधार पर बुद्धि का स्वरूप निम्न आधार पर समझा जा सकता है -

Scanned with CamScanner

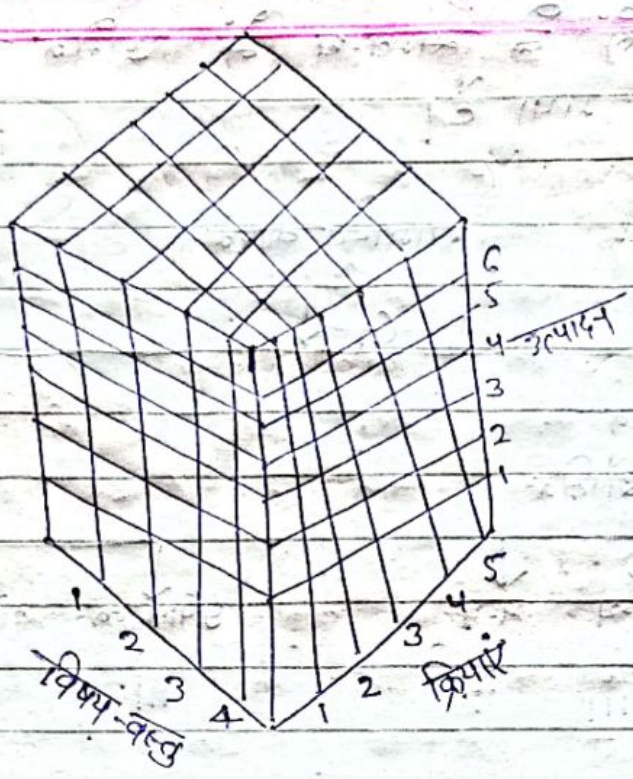

* क्रमिक महत्व का सिद्धान्त – ब्रिटिश मनोवैज्ञानिक वर्ट और बर्न ने ज, s तथा समूह कारकों से सम्बन्धित सिद्धान्तों से एक सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। जिसे क्रमिक महत्व का सिद्धान्त कहते हैं। इसके अनुसार मानवीय योग्यताएं क्रमिक रूप में व्यवस्थित होती है। इस व्यवस्था में प्रायः सामान्य कारक (ज), मुख्य समूह कारक, लघु समूह कारक तथा विशिष्ट कारक (s) क्रम से होते हैं। सामान्य कारक (ज) सर्वाधिक व्यापक कारक होता है जो सभी मानसिक क्रियाओं में सहायक होता है। ये सामान्य कारक (ज) दो मुख्य कारकों शाब्दिक व शैक्षिक योग्यता तथा गतिक व यांत्रिक योग्यताओं में विभक्त किया गया है। इन दोनों को पुनः शाब्दिक, मात्रिक, यांत्रिक सूचना तथा प्रयोगात्मक आदि स्थानिक जैसे दो समूह कारकों में बांटा गया है। इन लघु समूह कारकों को

Scanned with CamScanner

विशिष्ट कारकों के सम्बन्ध में अनेक विशिष्ट कारकों में बांटा गया है।

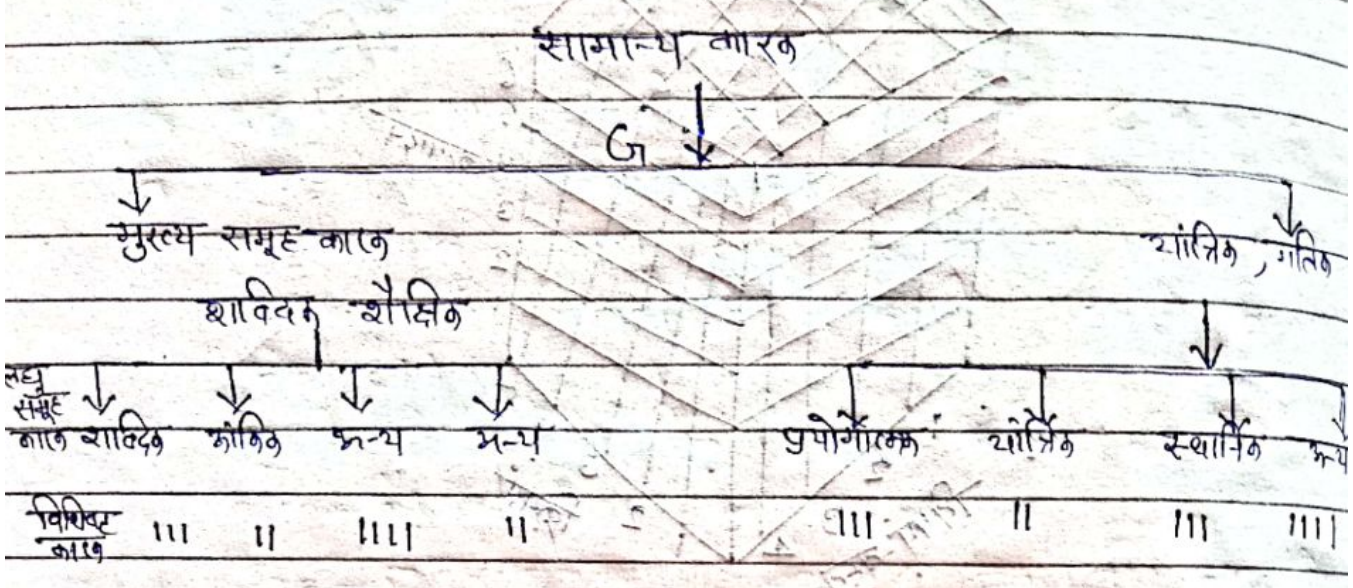

⊛ तरल, ठोस बुद्धि सिद्धान्त (अस्थिर स्पष्ट सिद्धान्त)-

इस सिद्धान्त को बुद्धि का स्वरूप स्पष्ट करने के दिशा में R.B. Cattell ने 1963 में प्रस्तुत किया बुद्धि को दो महत्वपूर्ण तत्व - तरल बुद्धि व ठोस बुद्धि के रूप में प्रस्तुत किया।

① तरल बुद्धि - इसका निर्धारण वंशानुगत कारकों द्वारा होता है। ये स्पीयर मैन के G कारकों के समान होता है। इसमें मुख्यतः तर्कशक्ति निहित रहती है।

② ठोस बुद्धि - इसका निर्धारण पर्यावरणीय कारकों द्वारा होता है, इसमें इन क्षमताओं को रखा जाता है जिसे व्यक्ति के उपयोग से प्राप्त करता है।

Scanned with CamScanner

* गार्डनर का बुद्धि सिद्धान्त - हॉवर्ड वि० विद्यालय के गार्डनर ने बुद्धि के एक अद्वितीय समकालीन सिद्धान्त को प्रस्तुत किया। जिसे बहुबुद्धि सिद्धान्त कहते हैं। यह सिद्धान्त पहली बार 1983 में उनकी पुस्तक 'फ्रेम प्रिंस आफ माइंड' व 'द थ्योरी आफ मल्टीपल इंटेलीजेनसी' में प्रकाशित हुआ। इनके अनुसार बुद्धि या मानव योग्यताओं की सात श्रेणियाँ हैं-

① तर्कपूर्ण गणितीय बुद्धि।
② भाषायी बुद्धि।
③ संगीतात्मक बुद्धि।
④ स्थानात्मक बुद्धि।
⑤ शारीरिक संचालन क्रियात्मक बुद्धि।
⑥ अन्तर्वैयक्तिक या पारस्परिक सम्बन्ध बुद्धि।
⑦ आन्तरिक व्यक्तिगत बुद्धि।

* बुद्धि A तथा बुद्धि B का सिद्धान्त- इस सिद्धान्त का प्रतिपादन मनोवैज्ञानिक हेब (हेब्ब) ने किया है। उन्होंने बुद्धि को 2 भागों में विभाजित किया है-

(1) बुद्धि A - इसका निर्धारण वंशानुक्रम होता है। अतः यह जन्म जात होती है। यह किसी व्यक्ति को किसी कार्य की रूपरेखा तैयार करने तथा उसे क्रियान्वित करने में सहायता करती है।

(2) बुद्धि B - इसका निर्माण वातावरण से होता है जो कि शैशवावस्था से शुरू होकर बाल्यावस्था को पार करता हुआ, किशोरावस्था में समाप्त हो जाता है।

Scanned with CamScanner

(*) बुद्धि की प्रकृति व विशेषताएं -

(1) बुद्धि सही गलत के निर्णय की योग्यता।
(2) बुद्धि तर्क करने की शक्ति है।
(3) बुद्धि जन्मजात होती है।
(4) बुद्धि अमूर्त चिन्तन है।
(5) बुद्धि सबके पास होती है लेकिन कम या ज्यादा हो सकती है। (इसी मात्रा में भिन्नता होती है।)
(6) बुद्धि के उचित विकास पर पर्यावरण का विशेष महत्व है।
(7) बुद्धि का विकास 18-20 वर्ष तक की आयु में होता है।
(8) योगिक क्रियाओं द्वारा बुद्धि में वृद्धि सम्भव है।
(9) लिंग-भेद का बुद्धि पर कोई अन्तर नहीं होता है।
(10) बुद्धि पर्यावरण के साथ समायोजन है।
(11) यह पूर्व अनुभवों से लाभ उठाने की योग्यता है।
(12) यह समस्या समाधान की योग्यता है।
(13) यह एक नहीं अपितु अनेक योग्यताओं का समुच्चय है।
(14) बुद्धि व ज्ञान में अन्तर होता है।

(*) बुद्धि का मापन - बुद्धि के प्रमाणिक मापन की विधियों की खोज आधुनिक युग में पाश्चात्य मनोवैज्ञानिकों ने शुरू की। इस सन्दर्भ में सर्वप्रथम जर्मन मनोवैज्ञानिक [वुण्ट] का नाम आता है

Scanned with CamScanner

उसने 1879 में बुद्धि मापन के लिए एक मनोवैज्ञानिक प्रयोगशाला की स्थापना की। इस प्रयोगशाला में तुष्ट के विषय (केटिल) ने बुद्धि परीक्षण तैयार करने का प्रयास किया। इन्हीं से प्रेरणा लेकर डोलन (1891), गिलबर्ट (1894) और वर्धले (1901) ने बच्चों की बुद्धि को मापने के लिए परीक्षण तैयार किये। परन्तु इनके द्वारा तैयार किये गये परीक्षणों को आज बुद्धि-परीक्षण नहीं माना जाता है। क्योंकि यह केवल मानसिक क्रियाओं का परीक्षण करते हैं।

इस क्षेत्र में प्रमाणित कार्य करने वाला सबसे पहला व्यक्ति फ्रांसीसी मनोवैज्ञानिक अल्बर्ट बिने था। उसने अपने साथी साइमन के सहयोग से 1905 में एक बुद्धि परीक्षण का निर्माण किया जो आज भी प्रमाणित माना जाता है। * बिने को ही बुद्धि-परीक्षण का जन्म-दाता माना जाता है।

देश-विदेश के मनोवैज्ञानिकों ने बिने-साइमन बुद्धि परीक्षण को मान्यता प्रदान की और उसे 1916 में स्टेनफोर्ड बिने स्केल के नाम से प्रमाणित किया। (1917) में ओटिस ने आर्मी ए- परीक्षण का निर्माण किया। और (1919) में आर्मी बी- परीक्षण को प्रस्तुत किया। इसके बाद अमेरिका के मनोवैज्ञानिक थर्स्टाइन ने 1926 में एक बुद्धि परीक्षण तैयार किया। उसने स्पष्ट किया कि बुद्धि को उसके देखे जा सकने वाले उत्पाद वे कार्य हैं जिन्हें कोई व्यक्ति पूर्ण करने में समर्थ होता है। उसने बुद्धि को वाक्य पूर्ति (C) और आन्तरिक त्रुटि-व्यक्ति (A), शब्द ज्ञान (B) तथा दिशा अनुभव (D) के रूप में बताया। इस आधार पर

Scanned with CamScanner

एक बुद्धि परीक्षण (C, A, B, D) भी प्रस्तुत किया।

भारत में बुद्धि परीक्षण की शुरुआत बिने साइमन परीक्षण के अनुवाद से हुई। सर्वप्रथम इसका तमिल तथा बंगाली भाषा में अनुवाद किया गया। इसके बाद 1912 में C.H. Rice ने भारतीय परिस्थितियों के अनुसार इसको 'हिन्दुस्तानी बिने परफॉरमेन्स स्केल' के नाम से प्रस्तुत किया। इसके बाद अनेक बुद्धि परीक्षण तैयार किये गये।

→ 1928 में इलाहाबाद में मुनरी के द्वारा।
→ 1933 में लज्जाशंकर झा द्वारा।
→ 1934 में जलोटा द्वारा।
→ 1939 में कीमत द्वारा।
→ 1942 में सोहनलाल के द्वारा।
→ 1955 में C.N. Bhatia ने बुद्धि परीक्षण तैयार किया।

उपरोक्त सभी में बुद्धि परीक्षणों की श्रृंखला में भाटिया बैट्री परीक्षण को सर्वाधिक मान्यता प्राप्त हुई और 1955 से वर्तमान समय तक न जाने कितने बुद्धि परीक्षणों का निर्माण हुआ और ये प्रक्रिया और भी विकसित हो रही है।

वास्तविक आयु व मानसिक आयु – बुद्धि परीक्षण के संदर्भ में किसी बालक या व्यक्ति की वास्तविक आयु से तात्पर्य उस आयु से है जो आयु बुद्धि परीक्षण देते समय होती है। यह माना जाता है कि व्यक्ति की बुद्धि का विकास 16 वर्ष की आयु तक होता है अतः बुद्धि परीक्षण के संदर्भ में 16 से अधिक आयु वाले व्यक्तियों को भी 16 वर्ष का माना

Scanned with CamScanner

जाता है। 15 दिन से अधिक को 1 माह मान लिया जाता है। माह को भी वर्ष में बदल दिया जाता है।

⇒ मानसिक आयु - बुद्धि परीक्षण के संदर्भ में मानसिक आयु से तात्पर्य उनके बौद्धिक विकास की सीमा से होता है। प्रयोग द्वारा यह ज्ञात किया जाता है कि किस आयु के सामान्य बालकों की मानसिक शक्तियाँ कितनी विकसित होती है। यदि 8 वर्ष का बालक 8० वर्ष के लिए निर्धारित मानसिक क्रियाओं को कर लेता है तो उसकी मानसिक आयु 8 वर्ष होगी। यदि वह 10 वर्ष की मानसिक क्रियाओं को कर लेता है तब उसकी आयु 10 वर्ष मानी जायेगी यदि 6 वर्ष की क्रियाओं को कर पाता है तो उसकी मानसिक आयु 6 वर्ष मानी जायेगी।

⇒ बुद्धिलब्धि- बुद्धिलब्धि से तात्पर्य बालक या व्यक्ति की मानसिक आयु एवं वास्तविक आयु के अनुपात से होता है।

अतः बुद्धिलब्धि (IQ) = $\frac{\text{मानसिक आयु}}{\text{शारीरिक आयु}} \times 100$

⇒ टरमन की बुद्धिलब्धि तालिका -

IQ	वर्ग
140 से अधिक	प्रतिभाशाली
120 से 139	प्रखर बुद्धि
110 से 119	उत्कृष्ट बुद्धि
90 से 109	सामान्य बुद्धि
80 से 89	मन्द बुद्धि
70 से 79	निर्बल बुद्धि
50 से 69	मूर्ख बुद्धि
25 से 49	मूढ़ बुद्धि
0 से 25	जड़ बुद्धि

Scanned with CamScanner

बुद्धिलब्धि का वितरण -

बुद्धिलब्धि की सीमाये	प्रतिशत (%)	वर्ग
130 से अधिक	2%	प्रतिभाशाली
121 - 130	7%	प्रखर बुद्धि
111 - 120	16%	तीव्र बुद्धि
91 - 110	50%	सामान्य बुद्धि
81 - 90	16%	मन्द बुद्धि
71 - 80	7%	अल्प बुद्धि
71 से कम	2%	जड़ बुद्धि

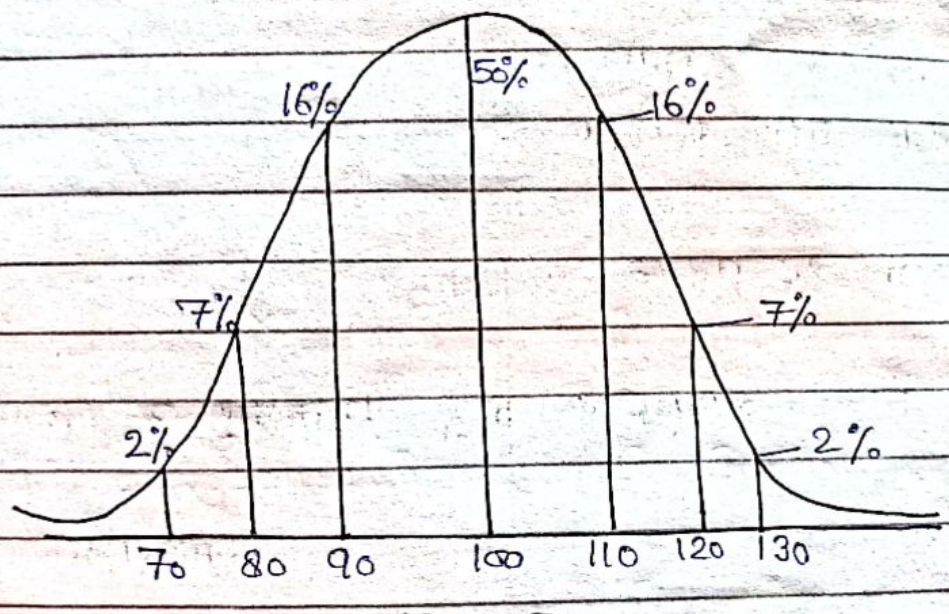

बुद्धि लब्धि वितरण

⇒ बुद्धि परीक्षण के प्रकार -

- बुद्धि परीक्षण
  - व्यक्तिगत बुद्धि परीक्षण
    - शाब्दिक बुद्धि परीक्षण
    - अशाब्दिक बुद्धि परीक्षण
  - सामूहिक बुद्धि परीक्षण
    - शाब्दिक बुद्धि परीक्षण
    - अशाब्दिक बुद्धि परीक्षण

Scanned with CamScanner

बुद्धि परीक्षणों को दो प्रकारों में बांटा जा सकता है
1- प्रयोज्य या परीक्षार्थियों की संख्या
2- परीक्षणों के प्रस्तुतीकरण का स्वरूप

इस प्रकार किये गये बुद्धि परीक्षण 4 प्रकार के हो सकते हैं-

1) व्यक्तिगत शाब्दिक बुद्धि परीक्षण ।
2) व्यक्तिगत अशाब्दिक बुद्धि परीक्षण ।
3) सामूहिक शाब्दिक बुद्धि परीक्षण ।
4) सामूहिक अशाब्दिक बुद्धि परीक्षण ।

1) व्यक्तिगत बुद्धि परीक्षण -

2) सामूहिक बुद्धि परीक्षण -

3) शाब्दिक बुद्धि परीक्षण - परस्पर वार्तालाप या साक्षात्कार के द्वारा ।

4) अशाब्दिक बुद्धि परीक्षण - स्थूल आकृतियों के द्वारा परीक्षण

व्यक्तिगत व सामूहिक बुद्धि परीक्षणों में तुलना -

व्यक्तिगत	सामूहिक
1) केवल एक व्यक्ति पर ।	① अनेक व्यक्तियों पर ।
2) प्रशासन व समय अधिक ।	② प्रशासन व समय कम ।
3) निपुण व प्रशिक्षित व्यक्तियों द्वारा ।	③ सामान्य व्यक्ति ही देखता है।
4) समय सीमा निर्धारित नहीं होती है।	④ समय सीमा निर्धारित होती है।
5) कम उम्र के लिए उपयोगी।	⑤ परिपक्व व्यक्तियों पर ।
6) प्राय: मौखिक होते हैं।	⑥ लिखित होते हैं।
7) अधिक विश्वसनीय ।	⑦ कम विश्वसनीय ।
8) गुणात्मक व मात्रात्मक दोनों पक्षों की जानकारी ।	⑧ केवल मात्रात्मक ।

Scanned with CamScanner

9) प्रश्नो मे परिवर्तन सम्भव, नकल नही ।	⑨ प्रश्नो मे परिवर्तन असंभव नकल की संभावना ।
10) अनपढ़ व्यक्तियों पर भी प्रयोग	⑩ अशिक्षित व्यक्तियों पर प्रयो
11) माहौल अनौपचारिक	⑪ औपचारिक ।
12) परीक्षार्थी को प्रोत्साहन की प्राप्ति	⑫ सामान्य प्रोत्साहन ।
13) योग्यता का सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन	⑬ कमी-2 संभव नही ।
निर्माण करना कठिन — मानकीकरण	निर्माण करना सरल ।
14) संकोची व्यक्तियो को परेशानी	⑭ कोई परेशानी नहीं ।
15) परिणाम (फलांकन) करना कठिन	⑮ फलांकन करना सरल ।
• वस्तुनिष्ठता कम	• अपेक्षाकृत अधिक
• वैधता एवं विश्वसनीयता अपेक्षाकृत कम	• अधिक

शाब्दिक व अशाब्दिक बुद्धि परीक्षण मे तुलना -

शाब्दिक	अशाब्दिक
1) भाषा के द्वारा शाब्दिक मानसिक	① चित्रो या स्थूल सामग्रियों के द्वारा ।
2) समस्या का प्रस्तुतीकरण ।	② सही चित्र या वस्तु छांटना क्रियाओं द्वारा
2) प्रश्नों के उत्तर भाषा में ही ।	③ अशिक्षित छोटे बालको व विदेशियों पर भी ।
3) शिक्षित या भाषा जानने वालों का व्यक्तियों पर	④ अप्रभावित ।
4) सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का ज्ञान	
5) कम खर्चीले होते है ।	⑤ खर्चीले ।
6) प्रशासन सरल	⑥ प्रशासन कठिन ।
• निर्माण एवं मानकीकरण सरल	• कठिन

शिक्षा के क्षेत्र में उपयोगी -

Scanned with CamScanner

1) प्रवेश हेतु छात्रों का चयन हर स्तर पर ।
2) छात्रों का वर्गीकरण ।
3) पिछड़े व मेधावी छात्रों की पहचान ।
4) विशिष्ट बालकों की शिक्षा ।
5) छात्रों का निदान व उपचार ।
6) छात्रवृत्ति हेतु चयन ।
7) बुद्धि लब्धि का ज्ञान ।
8) शैक्षिक समस्याओं का निदान व उपचार ।
9) अपव्यय व अवरोधन रोकना ।
10) मानसिक स्वास्थ्य के निदान व उपचार ।
11) शैक्षिक निर्देशन देना ।
12) व्यवसायिक निर्देशन देना ।
13) छात्रों के विषय में भविष्यवाणी करना ।
14) शिक्षकों के कार्यों का मूल्यांकन ।
15) शिक्षकों की कार्य कुशलता बढ़ाना ।
16) उचित वातावरण का निर्माण करना ।
17) वंशानुक्रम विशेषताएं जानना ।
18) पर्यावरणीय कारकों की पहचान करना ।
19) रुचि का पता लगाना ।
20) सीखने की गति को ज्ञात करना ।

Scanned with CamScanner

Imp.

⇒ व्यक्तिगत विभिन्नताओं पर आधारित विधियाँ -

① प्रोजेक्ट प्रणाली - (किल पैट्रिक) -

प्रोजेक्ट पूरे मन से किया जाने वाला एक उद्देश्यपूर्ण कार्य होता है। जो सामाजिक वातावरण में सम्पन्न होता है इसमें करके की सीखो सिद्धान्त पर बल दिया जाता है।

जैसे - मिट्टी के बर्तन बनाना, नाटक खेलना, बगवानी करना, सांस्कृतिक कार्यक्रम और पिकनिक आदि।

② डाल्टन प्रणाली (हेलेन पार्कहर्स्ट) - इसमें छात्र को अपनी योग्यता, क्षमता व रुचि के अनुसार कार्य करने की स्वतन्त्रता होती है। उसे समय सारणी के बन्धन में नहीं बाँधा जाता है। विद्यार्थी चाहे तो सारा दिन एक ही विषय को पढ़ सकता है। इसमें छात्र को दिया गया कार्य एक निश्चित अवधि में अपनी इच्छानुसार करना होता है। अध्यापक की भूमिका मात्र एक पथ प्रदर्शक की होती है।

डाल्टन प्रयोगशाला योजना शिक्षण की कोई प्रणाली अथवा पद्धति नहीं है बल्कि यह एक सैद्धान्तिक पुर्नगठन की एक विधि है। जो सीखने एवं सिखाने की समस्त क्रियाओं में एकता स्थापित करती है।

③ बिनेटिका प्रणाली (डा० कार्लटन वाशबर्न) -

इस प्रणाली में बालक को कार्य करने की पूर्ण स्वतन्त्रता रहती है इसमें सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को छोटी - 2 इकाई में बाँट

Scanned with CamScanner

दिया जाता है। एक इकाई के बाद ही दूसरी इकाई का अध्ययन किया जाता है। छात्र अपनी परीक्षा स्वयं करता है। इसमें कोई बालक अनुत्तीर्ण नहीं होता है। प्रत्येक विषय में ग्रेड दिये जाते हैं। इसमें प्रत्येक बालक अपनी गति के अनुसार प्रगति करता है।

(4) डेक्रोली प्रणाली (डा० ओविड डेकोली) - बालक को शिक्षा उसके जीवन से मिलनी चाहिए। रुचि, क्षमता एवं स्तर के अनुसार उनको विभाजित कर आगे बढ़ने की शिक्षा दी जानी चाहिए। प्राकृतिक वातावरण में माता-पिता के सहयोग से शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए।

(5) कान्ट्रेक्ट (ठेका) प्रणाली - यह प्रणाली डाल्टन व विनेटका प्रणाली का मिला जुला रूप है। इसमें सप्ताह, माह या वर्ष के आधार पर कार्य एक साथ दे दिया जाता है। छात्र को कार्य करने की पूर्ण स्वतन्त्रता होती है। छात्र यदि चाहे एक वर्ष का काम 8 माह में भी खत्म कर सकता है और यदि वे चाहे तो उस कार्य को अगले साल खत्म कर सकता है। जब भी कार्य समाप्त होता है तब उसकी परीक्षा ले ली जाती है।

(6) क्रिया विधि - शिक्षक कक्षा को सक्रिय रखने का प्रयत्न रखता है। इसमें विद्यार्थी समझकर प्रश्न पूछकर, कक्षा में होने वाली गतिविधियों में हिस्सा लेकर आदि क्रियाओं से पाठ को आत्मसात करता है। इसमें छात्र का निरीक्षण लगातार चलता रहता है।

Scanned with CamScanner

⑦ अभिक्रमित अनुदेशन । (P.I)

⑧ किण्डर गार्डन प्रणाली (फ्रोबेल) –

किण्डरगार्टन शब्द का अर्थ है- बच्चों का बगीचा । इसमें शिक्षक को एक माली और बच्चे को एक पौधा मानकर शिक्षण प्रक्रिया की जाती है। बच्चों के ऊपर किताबों का कोई बोझ नहीं होता है, बालक हँसते-खेलते घूमते, बोलते, सीख जाता है।

⑨ माण्टेसरी प्रणाली (डा० मारिया माण्टेसरी) – छोटे बच्चों को शिक्षित करने की यह सबसे योग्य प्रणाली है यह मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित होती है। स्वतन्त्र, आत्मानुशासन, आत्मनिर्भरता, व्यावहारिक शिक्षा, व्यक्तिगत शिक्षा, खेल, कर्मेन्द्रियों एवं ज्ञानेन्द्रियों की शिक्षा इस प्रणाली के आधार है। दृष्टि, श्रवण, स्पर्श (ध्यान), घ्राण (सूंघने की शक्ति) एवं स्वाद शक्तियों एवं दैनिक उपकरणों की सहायता से शिक्षा प्रदान की जाती है।

⑩ ह्यूरिस्टिक प्रणाली (आर्मस्ट्रांग) – इसका अर्थ है - मैंने खोज लिया। इस पद्धति के द्वारा बालक, शिक्षक, निरीक्षण, यन्त्रों और पुस्तकों की सहायता से स्वयं ज्ञानार्जन करता है। यह विज्ञान जैसे विषयों के लिए बहुत लाभकारी है। यह बालकों को सदैव क्रियाशील बनाये रखती है।

⑪ मॉरीसन प्रणाली (H.C. मॉरीसन) – यह मोपरा

Scanned with CamScanner

निर्देशित एवं निर्देशन पर आधारित है और सीखने में इकाई पर बल देती है। सीखने में रुचि को स्थापित करना इसका महत्वपूर्ण कार्य है।

(12) बेसिक शिक्षा प्रणाली (गाँधी) – निःशुल्क शिक्षा एवं हस्तकला पर आधारित यह प्रणाली बालक के सर्वांगीण विकास पर बल देती है। इसका माध्यम बालक की मातृभाषा होती है। आत्मनिर्भरता एवं आदर्श नागरिकों के निर्माण के लक्ष्य के साथ – ☰ वेश - प्रेम, सत्य, अहिंसा आदि की भी शिक्षा दी जाती है। यह प्रणाली बाल केन्द्रित शिक्षा प्रणाली पर बल देती है।

Scanned with CamScanner

Date 04/07/13
Page

व्यक्तित्व - अर्थ एवं परिभाषा -

सामान्य अर्थों में व्यक्तित्व से तात्पर्य शारीरिक गठन, रंगरूप, वेशभूषा, बातचीत के ढंग तथा कार्य व्यवहार जैसे विभिन्न गुणों के संयोजन से लगाया जाता है।

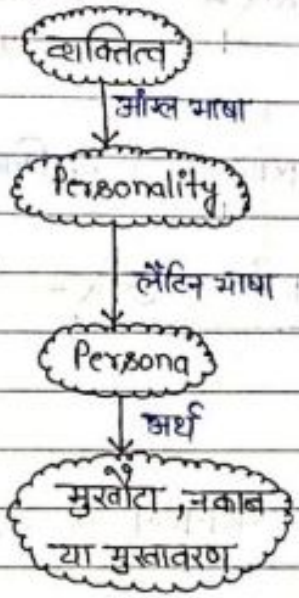

अर्थात 'नकली चेहरा'

व्यक्तित्व का शाब्दिक अर्थ वास्तव में संकुचित है। इस शाब्दिक अर्थ के अनुसार व्यक्तित्व का अर्थ व्यक्ति के बाह्य रूप-रंग, आकार आदि से लिया जाता है। परन्तु व्यक्तित्व की इस व्याख्या को हम पूर्ण एवं सन्तोषप्रद नहीं मान सकते; क्योंकि मनुष्य की आकृति ही व्यक्तित्व का बोध नहीं कराती।

कुछ मनुष्यों का बाह्य रूप-रंग बिल्कुल आकर्षक नहीं होता परन्तु उनका व्यक्तित्व अत्यन्त प्रभावशाली होता है। जैसे- महात्मा गाँधी, नेल्सन मण्डेला, टैगोर, शास्त्री, विनोबा आदि।

अतः स्पष्ट है कि व्यक्ति के व्यक्तित्व में बाह्य गुण हों या न हों परन्तु आन्तरिक गुणों का होना परम आवश्यक है। साधारणतः यह स्वीकार किया जाता है कि व्यक्तित्व विचित्र है, जटिल है, व्याख्या से परे है।

⇒ परिभाषाएँ-

① वुडवर्थ के अनुसार- "व्यक्तित्व व्यक्ति की सम्पूर्ण गुणात्मकता है।"

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

(2.) मॉर्गन तथा गिलीलैण्ड के अनुसार - "हम जो हैं, उन सबका योग व्यक्तित्व के नाम से पुकारा जाता है।"

(3.) वेशित्न के अनुसार - "व्यक्तित्व व्यक्ति के संगठित व्यवहार का सम्पूर्ण चित्र होता है।"

(4.) फारस के अनुसार - "व्यक्तित्व संस्कृति का वैयक्तिक पक्ष है।"

(5.) बोरिंग व अन्य के अनुसार - "व्यक्तित्व व्यक्ति का अपने वातावरण के साथ उचित समायोजन है।"

(6.) वैलेनटाइन या वैलेनटीन के अनुसार - "व्यक्तित्व जन्मजात और अर्जित प्रवृत्तियों का योग है।"

(7.) बिग व हण्ट के अनुसार - "व्यक्तित्व किसी व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यवहार - प्रतिमान और इसकी समस्त विशेषताओं के योग का उल्लेख करता है।"

(8.) गिलफोर्ड के अनुसार - "व्यक्तित्व गुणों का समन्वित रूप है।"

(9.) आलपोर्ट के अनुसार - "व्यक्तित्व व्यक्ति के अन्दर उन मनो-शारीरिक गुणों का गत्यात्मक संगठन है, जो वातावरण के साथ उसका एक अनूठा समायोजन स्थापित करते हैं।"

(10.) मन के अनुसार - "व्यक्तित्व एक व्यक्ति के व्यवहार के तरीकों, रूचियों, दृष्टिकोणों, क्षमताओं, योग्यताओं, तथा अभिरूचियों का सबसे विशिष्ट संगठन है।"

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

Date / /
Page

(11.) वीसेज एवं वीसेज के अनुसार- "व्यक्तित्व, व्यक्ति की आदतों, अभिवृत्तियों और लक्षणों का तह संगठन है जो जैविक, सामाजिक और सांस्कृतिक कारकों से उत्पन्न होता है।"

(12.) मैकडी के अनुसार- "व्यक्तित्व रूचियों का वह समाकलन है जो व्यक्ति के व्यवहार को एक विशेष प्रकार का वैयक्तिक रूप प्रदान करते हैं।"

⇒ व्यक्तित्व का विकास- व्यक्तित्व का गठन हमारे विकास की विभिन्न अवस्थाओं में होता है। इसमें निहित कारक वंशानुक्रम तथा पर्यावरणजन्य तत्वों से सम्बन्धित होते हैं।

व्यक्ति के विकास की व्याख्या करने में तीन प्रकार के सिद्धान्त उपयोगी सिद्ध हुए हैं। प्रथम, मनोविश्लेषणवादी सिद्धान्त जिसके अनुसार व्यक्ति के जीवन में उसके प्रारम्भिक पाँच वर्ष उसके व्यक्तित्व निर्माण में महत्वपूर्ण माने जाते हैं।

द्वितीय, अधिगम सिद्धान्त जिसमें यह स्वीकार किया गया कि अधिगम के बगैर व्यक्तित्व का विकास सम्भव नहीं है। तृतीय, रोल सिद्धान्त जिसके अनुसार व्यक्तित्व के विकास हेतु प्राणी को नवीन भूमिकाओं का निर्वाह कर लेने की दक्षता अर्जित करना आवश्यक समझा जाता है।

आगे इन सिद्धान्तों के सन्दर्भ में व्यक्तित्व के विकास सम्बन्धी विशेषताओं का वितरण दिया गया-

(i) मनोविश्लेषणवादी धारणा के अनुसार व्यक्तित्व का विकास।
(ii) अधिगम सिद्धान्तों के अनुसार व्यक्तित्व का विकास।
(iii) भूमिका सिद्धान्तों के अनुसार व्यक्तित्व का विकास।

डॉ० आर० ए० शर्मा - 400

⇒ व्यक्तित्व की संरचना-

→ फ्रायड के अनुसार-

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

Date / /
Page

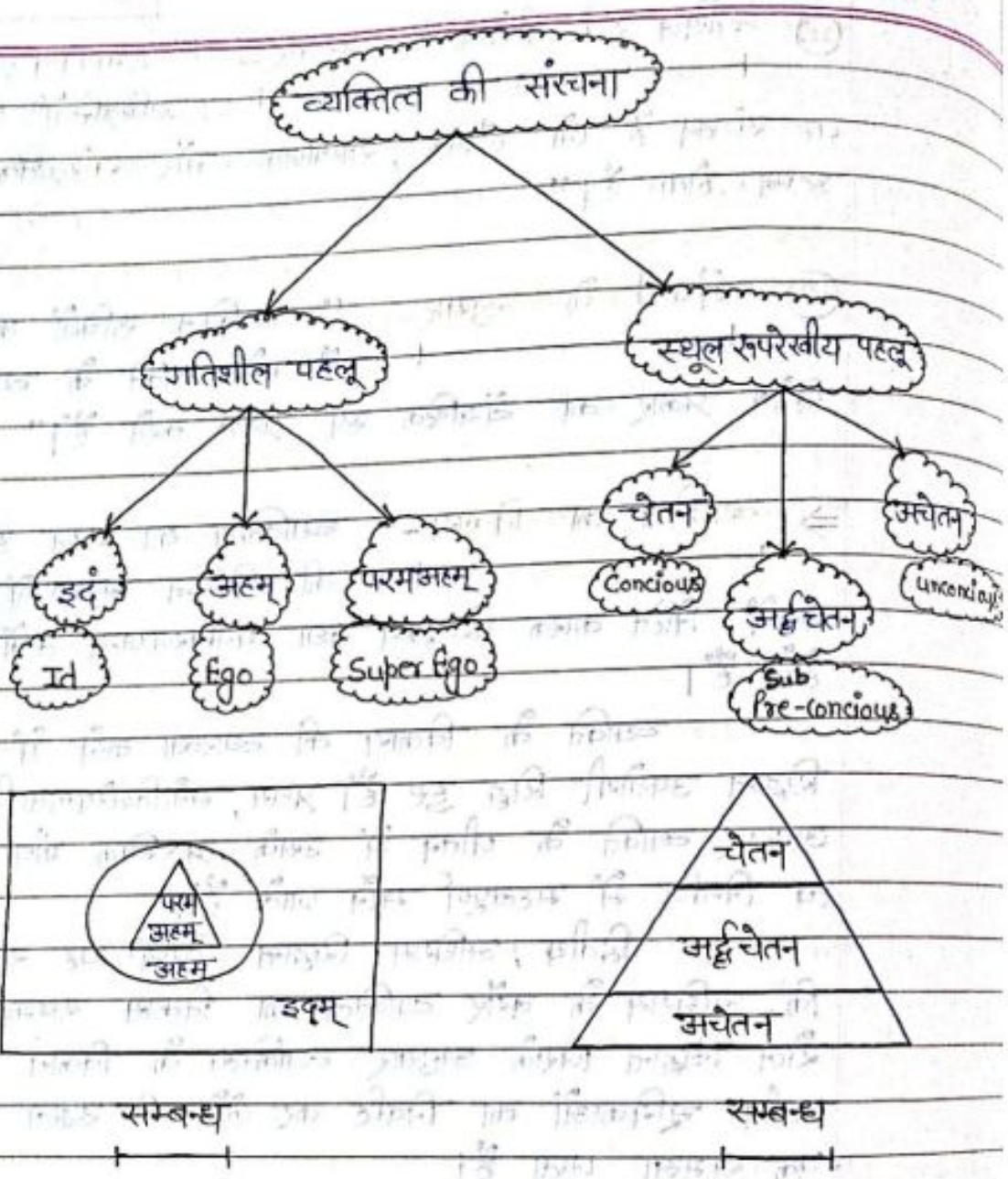

Note:-

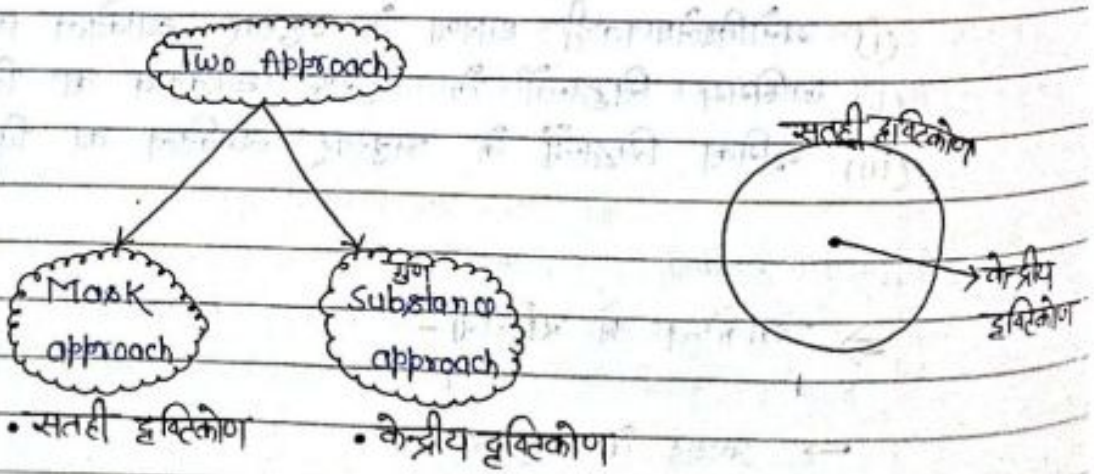

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

Date 05/07/13
Page

फ्रॉयड का मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त –

सिगमण्ड फ्रॉयड (1856-1939) ने करीब 40 साल के अपने नैदानिक अनुभवों के बाद व्यक्तित्व के जिस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया, उसे व्यक्तित्व का 'मनोवैश्लेषिक सिद्धान्त' कहा जाता है।

मनोवैश्लेषिक सिद्धान्त मानव प्रकृति या स्वभाव के बारे में कुछ 'मूल पूर्व कल्पनाएँ' पर आधारित है। इन पूर्वकल्पनाओं में निम्नांकित प्रमुख हैं –

(i) मानव व्यवहार बाह्य कारकों द्वारा निर्धारित होता है तथा ऐसे व्यवहार अविवेकपूर्ण, अपरिवर्तनशील, समस्थितिक तथा ज्ञेय (Knowable) होते हैं।
(ii) मानव प्रकृति पूर्णता, शरीरगठनी तथा अप्रलक्षता जैसी पूर्वकल्पनाओं से हल्के-फुल्के ढंग से प्रभावित होती है।
(iii) मानव प्रकृति आत्मनिष्ठ की पूर्वकल्पना से बहुत कम प्रभावित होती है।

इन पूर्वकल्पनाओं पर आधारित मनोवैश्लेषिक सिद्धान्त की व्याख्या निम्नांकित 'तीन मुख्य भागों' में बाँट कर की जाती है –

(क) व्यक्तित्व की संरचना (Structure of Personality)।
(ख) व्यक्तित्व की गतिकी (Dynamics of Personality)।
(ग) व्यक्तित्व का विकास (Development of Personality)।

इस अनुच्छेद का वर्णन निम्नांकित है –

(क) व्यक्तित्व की संरचना –

फ्रॉयड ने व्यक्तित्व की संरचना का वर्णन करने के लिए निम्नांकित दो मॉडलों का निर्माण किया –

(अ) अकारात्मक मॉडल (Topographical Model)।
(ब) गत्यात्मक या संरचनात्मक मॉडल (Dynamic or Structural Model)।

इन दोनों मॉडलों की व्याख्या निम्नांकित है –

(अ) अकारात्मक मॉडल –

मन का अकारात्मक मॉडल से तात्पर्य वैसे पहले से होता है; जहाँ संघर्षमय परिस्थिति की गत्यात्मकता उत्पन्न होती है। मन का यह पहलू सचमुच में व्यक्तित्व के गत्यात्मक

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

शक्तियों के बीच होने वाले संघर्षों का एक कार्य स्थल होता है। फ्रॉयड ने इसे तीन स्तरों में बाँटा है-

(i) चेतन (Conscious)।
(ii) अर्द्धचेतन या अवचेतन या सुलभ स्मृति (Subconscious or Preconscious)
(iii) अचेतन (unconscious)

(ब) गत्यात्मक या संरचनात्मक मॉडल -

फ्रॉयड के अनुसार मन के गत्यात्मक मॉडल से तात्पर्य उन साधनों से होता है; जिनके द्वारा मूल प्रवृत्तियों से सम्पन्न उत्पन्न मानसिक संघर्षों का समाधान होता है। ऐसे साधन या प्रतिनिधि तीन हैं-

(i) उपाहं (Id) । (इदम्) प्रकृति - अचेतन
(ii) अहं (Ego) । अचेतन
(iii) पराहं (Super Ego) । चेतन

(स) व्यक्तित्व की गतिकी -

फ्रॉयड के अनुसार मानव जीव एक जटिल तन्त्र है; जिसमें 'शारीरिक ऊर्जा' तथा 'मानसिक ऊर्जा' दोनों ही होते हैं।

शारीरिक ऊर्जा से व्यक्ति शारीरिक क्रियाएँ जैसे- दौड़ना, लिखना, साँस लेना आदि करता है।

मानसिक ऊर्जा से व्यक्ति मानसिक क्रियाएँ या कार्य जैसे- स्मरण, प्रत्यक्षण चिन्तन आदि करता है।

फ्रॉयड के अनुसार इन दोनों तरह की ऊर्जाओं का स्पर्श बिन्दु 'उपाहं' होता है। फ्रॉयड ने इन ऊर्जाओं से सम्बन्धित कुछ ऐसे सम्प्रत्यय का विकास किया है; जिनसे व्यक्तित्व की 'गत्यात्मक पहलुओं' का वर्णन होता है जो अग्रसर हैं-

(i) मूलप्रवृत्ति (Instinct)।
(ii) चिन्ता (Anxiety) (i) वास्तविक चिन्ता, (ii) तंत्रिकातापी चिन्ता (iii) नैतिक चिन्ता।
(iii) अहं रक्षात्मक प्रक्रम (Ego Defense Mechanism)।

(i) मूलप्रवृत्ति - मूलप्रवृत्ति से तात्पर्य वैसे जन्मजात शारीरिक उत्तेजना

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

रो होता है, जिसके द्वारा व्यक्ति के सभी तरह के व्यवहार निर्धारित किये जाते हैं।

फ्रॉयड ने मूलप्रवृत्तियों को मूलतः दो भागों में बाँटा है-

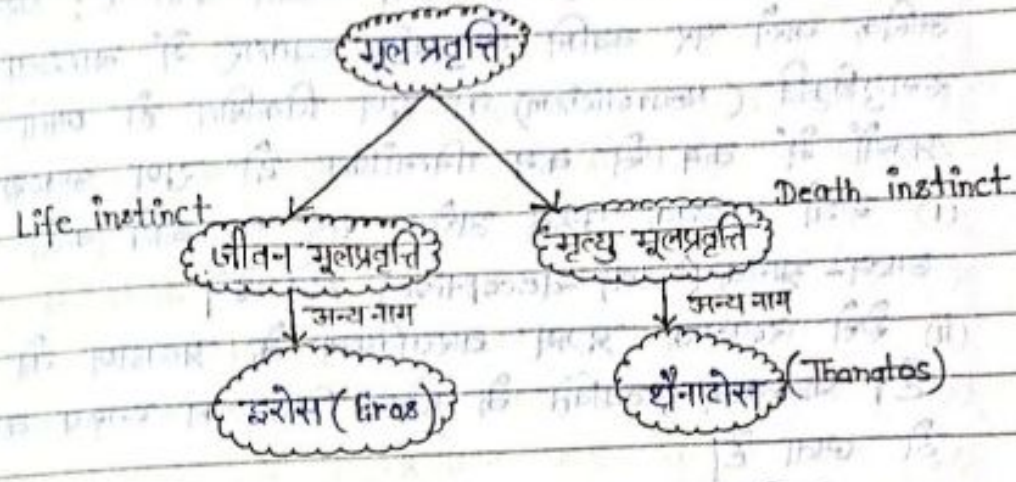

Note:- यौन मूलप्रवृत्ति के ऊर्जा बल को 'लिबिडो' (Libido) कहा जाता है। (काम-शक्ति)

(ii) चिन्ता -

फ्रॉयड के अनुसार चिन्ता एक ऐसी भावात्मक एवं दुखद अवस्था होती है, जो अहम् को आलम्बित खतरा से सतर्क करता है ताकि व्यक्ति वातावरण के साथ अनुकूली ढ़ग से व्यवहार कर सके।

फ्रॉयड ने चिन्ता के 3 प्रकार बतलाये हैं-

(i) वास्तविक चिन्ता (Realistic anxiety)।

(ii) तंत्रिकाभापी चिन्ता (Neurotic anxiety)।

(iii) नैतिक चिन्ता (Moral anxiety)।

→ ये तीनों चिन्ताएँ आपस में शायद ही कभी एक-दूसरे से पूर्णतः भिन्न रह पाती हैं। सच्चाई यह है कि एक तरह की चिन्ता किसी दूसरे प्रकार की चिन्ता को जन्म देती है।

(iii) मनोरचनाओं या अहम् रक्षात्मक प्रक्रम -

अहम् रक्षात्मक प्रक्रम के विचार का प्रतिपादन तो 'सिगमण्ड फ्रायड' ने किया परन्तु इसकी सूची

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

को उनकी पुत्री 'अन्ना फ्रायड' तथा अन्य 'नव-फ्रायडिन' द्वारा पूरा किया गया।

अहम् रक्षात्मक प्रक्रम अहम् की चिन्ताओं से बचा पाता है। रक्षात्मक प्रक्रमों का प्रयोग सभी व्यक्ति करते हैं; परन्तु इसका प्रयोग अधिक करने पर व्यक्ति के प्रति व्यवहार में बाध्यता (Compulsion) एवं स्नायुविकृति (Neuroticism) का गुण विकसित हो जाता है। सभी रक्षात्मक प्रक्रमों में कम से कम निम्नांकित दो गुण अवश्य पाये जाते हैं-

(i) सभी रक्षात्मक प्रक्रम अचेतन स्तर पर कार्य करते हैं। अतः वे आत्म-भ्रामक (self-deceptive) होते हैं।

(ii) ऐसे रक्षात्मक प्रक्रम वास्तविकता के प्रत्यक्षण को विकृत कर देते हैं। फलस्वरूप, व्यक्ति के लिए चिन्ता का स्वरूप कम धमकी पूर्ण हो जाता है।

प्रमुख रक्षात्मक प्रक्रम निम्नांकित हैं-

(i) दमन (Repression)।
(ii) यौक्तिकरण (Rationalization)। (युक्तिकरण)
(iii) प्रतिक्रिया निर्माण (Reaction Formation)।
(iv) प्रतिगमन (Regression)।
(v) प्रक्षेपण (Projection)।
(vi) विस्थापन (Displacement)।

उपर्युक्त रक्षात्मक प्रक्रमों से व्यक्ति अपने आप को बाह्य एवं आन्तरिक तनावों से बचाता है। प्रत्येक रक्षात्मक प्रक्रम के उपयोग में मनोवैज्ञानिक ऊर्जा खर्च होती है; और इसका प्रयोग सभी स्वस्थ व्यक्तियों द्वारा किया जाता है।

(ग) व्यक्तित्व का विकास- फ्रॉयड ने व्यक्तित्व विकास की व्याख्या दो ——— दृष्टिकोणों से की है।

पहला दृष्टिकोण इस बात पर बल डालता है कि व्यस्क व्यक्तित्व बाल्यावस्था के भिन्न-2 तरह की अनुभूतियों द्वारा नियंत्रित होती है। तथा दूसरा दृष्टिकोण के अनुसार जन्म के समय लैंगिक ऊर्जा (sexual energy) बच्चों में मौजूद होती है, जो विभिन्न मनोलैंगिक अवस्थाओं से होकर विकसित होती है।

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

फ्रॉयड के इस दूसरे दृष्टिकोण को "मनोलैंगिक विकास का सिद्धान्त" कहा जाता है। इस सिद्धान्त की दो प्रमुख विशेषताएँ हैं-
(i) मनोलैंगिक विकास की 5 अवस्थाएँ होती हैं और इनमें से प्रथम तीन तथा अन्तिम अवस्था में एक स्वतन्त्र कामुकता क्षेत्र (erogenous zone) उत्पन्न होता है।
(ii) मनोलैंगिक सिद्धान्त के अनुसार मानव विकास का मुख्य बल लैंगिक मूलप्रवृत्ति होता है; जो प्रारम्भिक विकासात्मक वर्षों में कामुकता-क्षेत्र से होकर विकसित होता है।

फ्रॉयड द्वारा प्रतिपादित मनोलैंगिक विकास के सिद्धान्त की पाँच अवस्थाएँ क्रम में निम्नांकित हैं-
(i) मुखावस्था (oral stage)।
(ii) गुदावस्था (Anal stage)।
(iii) लिंग प्रधानावस्था (Phallic stage)।
(iv) अव्यक्तावस्था (Latency stage)।
(v) जनेन्द्रियावस्था (Genital stage)। (किशोरावस्था)

इन मनोलैंगिक अवस्थाओं से होकर व्यक्ति की लैंगिक ऊर्जा का धीरे-2 विकास होता जाता है; जिससे व्यक्ति बाल्यावस्था के निष्क्रियता को त्याग कर व्यस्कावस्था में सामाजिक रूप से उपयोगी एवं सुखमय जीवन जीता है।

⇒ फ्रॉयड के सिद्धान्त का मूल्यांकन-

* गुण-

(1) यह सिद्धान्त काफी विस्तृत एवं चुनौतीपूर्ण है। इसके द्वारा व्यक्तित्व विकास की व्याख्या बोधगम्य भाषा में की गई है।
(2) फ्रॉयड के सिद्धान्त के अधिकांश सम्प्रत्यय ऐसे हैं; जो आधुनिक व्यक्तित्व मनोवैज्ञानिकों के लिए इस क्षेत्र में वर्णनात्मक शोध करने के लिए इस क्षेत्र में वर्णनात्मक शोध करने के लिए एक महत्वपूर्ण साधन साबित हुए हैं।
(3) फ्रॉयड के सिद्धान्त का स्वरूप ही कुछ ऐसा है कि इसके माध्यम

Scanned with CamScanner
Scanned with CamScanner

से मानव व्यवहार के बारे में ज्ञात तथ्यों को तार्किक रूप से मनोवैश्लेषिक ढाँचे में आसानी से ढाला जा सकता है।
④ दिन-प्रतिदिन का मानव-व्यवहार अर्थहीन नहीं होता है।

* दोष -

① फ्रॉयड के सिद्धान्तों की विधि वैज्ञानिक नहीं है।
② इस सिद्धान्त के बहुत सारे सम्प्रत्यय अस्पष्ट शब्दों से वर्णित है। तथा उनकी आधुनिक जाँच भी सम्भव नहीं है।
③ आधुनिक मनोवैज्ञानिकों का मत है कि फ्रॉयड ने अपने सिद्धान्त को 'व्यक्तिगत प्रेक्षण' पर आधारित किया है।
④ 'लैंगिक ऊर्जा' पर जरूरत से ज्यादा बल।
⑤ कुछ मतानुसार इस सिद्धान्त के कुछ सम्प्रत्यय जरूरत से ज्यादा 'पौराणिक' एवं 'कल्पनाओं' काल्पनिक कथाओं पर आधारित है।
⑥ 'मातृमनोग्रन्थि' एवं 'पितृमनोग्रन्थि' अविश्वसनीय या वास्तविकता की सीमा से बाहर प्रत्यय।

हॉल तथा उनके सहयोगियों ने बहुत ही सटीक शब्दों में टिप्पणी करते हुए कहा है - "सही या गलत, सिगमण्ड फ्रॉयड ने व्यक्तित्व मनोविज्ञान की जाँच के एक सही रास्ते पर ला रखा है और उसके लिए हम सभी लोग उनके आभारी हैं।"

⇒ अनुप्रयोग -

① स्वप्न विश्लेषण।
② पाराप्रेक्सेज या दैनिक जीवन की मनोविकृतियाँ।
③ मनोचिकित्सा।

फ्रॉयड के अनुसार - "स्वप्न अचेतन की ओर जाने का एक प्रशासकीय मार्ग कहा है।"

इरिक इरिक्सन : व्यक्तित्व का मनोसामाजिक सिद्धान्त -

इरिक इरिक्सन

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

(1902) उन मनोविश्लेषकों में से एक हैं, जिन्हें सामान्यतः एक अहम् मनोवैज्ञानिकों के रूप में पहचान की गयी है। इन्होंने व्यक्तित्व के सिद्धान्त के प्रतिपादन में फ्रॉयड द्वारा प्रस्तावित विकासात्मक अवस्थाओं को स्वीकार करते हुए उसे व्यक्ति के पूरे जीवनकाल तक विस्तृत किया और उसका अध्ययन किया।

इसके सिद्धान्तों में फ्रॉयड के विचारों से हटकर व्यक्तित्व को सामाजिक एवं ऐतिहासिक कारकों के रूप में भी समझने की कोशिश की गई है। इसलिए इनके द्वारा प्रतिपादित व्यक्तित्व के सिद्धान्त को 'मनोसामाजिक सिद्धान्त' कहा गया।

// इरिक्सन के व्यक्तित्व सिद्धान्त भी मानव प्रकृति में पूर्णतावाद पर्यावरणीयता तथा परिवर्तनशीलता को सबसे अधिक महत्वपूर्ण बतलाया है।

इरिक्सन के व्यक्तित्व सिद्धान्त भी मानव प्रकृति के बारे में कुछ विशेष पूर्वकल्पना करता है। इन पूर्वकल्पनाओं को संक्षेप में इस प्रकार वर्णन किया जा सकता है-

(i) इरिक्सन का मनोसामाजिक सिद्धान्त मानव प्रकृति में पूर्णतावाद पर्यावरणीयता तथा परिवर्तनशीलता का सबसे अधिक महत्वपूर्ण बतलाया है।

(ii) मानव प्रकृति के अन्य पहलुओं जैसे- निर्धार्यता, विवेकपूर्णता, वस्तुनिष्ठता, अग्रलक्षता, विषमस्थिति तथा ज्ञेयता को मनोसामाजिक सिद्धान्त में तुलनात्मक रूप से कम महत्व दिया गया है।

→ इरिक्सन द्वारा प्रतिपादित व्यक्तित्व सिद्धान्त में मनोसामाजिक विकास की (8) अवस्थाओं तथा उनमें होने वाले प्रमुख विकासों का वर्णन अग्रसर है-

(1) शैशवावस्था : विश्वास बनाम अविश्वास।
(2) प्रारम्भिक बाल्यावस्था : स्वतन्त्रता बनाम लज्जाशीलता।
(3) खेल अवस्था : पहल-शक्ति बनाम दोषिता।
(4) स्कूल अवस्था : परिश्रम बनाम हीनता।
(5) किशोरावस्था : अहम् पहचान बनाम भूमिका संभ्रांति। (Net Dec13)
(6) तरुण वयस्कावस्था : घनिष्ठ बनाम विलगन।
(7) मध्य वयस्कावस्था : जननात्मकता बनाम स्थिरता।
(8) परिपक्वता : अहम् सम्पूर्णता बनाम निराशा।

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

ऑलपोर्ट का लक्षण सिद्धान्त -

गॉर्डन ऑलपोर्ट (1897-1967) का व्यक्ति सिद्धान्त एक ऐसा सिद्धान्त है; जिसमें मानवतावादी एवं व्यक्तिवादी दोनों से मानव-व्यवहार का अध्ययन करने का एक अनुपम संगम को मिला है।

इनके सिद्धान्त में मानवतावादी दृष्टिकोण की परख इस बात से होती है कि इसमें मानव व्यवहार के सभी पहलुओं जिसमें वर्द्धन की क्षमताएँ / अन्तःशक्तियाँ, अनुभवातीत्व तथा आत्मसिद्धि भी सम्मिलित के अध्ययन पर बल डाला गया है।

व्यक्तिवादी के रूप में आलपोर्ट का एक ग्रहणशील मनोवैज्ञानिक माना गया है; क्योंकि वे इस सिद्धान्त के प्रतिपादन में विभिन्न क्षेत्रों जैसे- दर्शनशास्त्र, समाजशास्त्र, साहित्य आदि से महत्वपूर्ण तथ्यों का चयन करके उसे विशेष ढंग से पिरोया है।

ऑलपोर्ट के अनुसार व्यक्तित्व व्यक्ति का वह व्यवहार है जो उसमें निहित कुछ लक्षणों (Traits) से निर्देशित होता है। आलपोर्ट ने व्यक्तित्व लक्षणों को दो वर्गों में विभाजित किया है-

(i) सामान्य लक्षण।
(ii) व्यक्तिगत लक्षण।

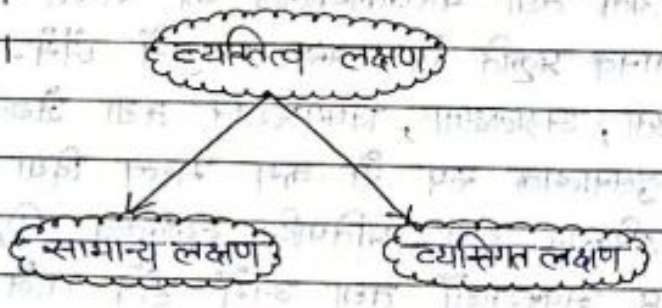

(i) सामान्य लक्षण - (Common Traits)

ऑलपोर्ट महोदय ने इस वर्ग में उन लक्षणों को रखा है; जो किसी समाज के सभी व्यक्तियों में विद्यमान होते हैं और जिन लक्षणों से समाज विशेष के सामाजिक मूल्यों की और सामाजिक रीति-रिवाजों की झलक मिलती है।

आलपोर्ट का मानना है कि मनुष्यों में इन लक्षणों का विकास सामाजिक दबाव में होता है। ये व्यक्ति के मौलिक लक्षण नहीं होते अतः ये समाज के सभी व्यक्तियों में पाये जाते हैं। इसलिए इनके आधार पर उनके व्यक्तित्व की व्याख्या नहीं की जा सकती है।

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

(ii) व्यक्तिगत लक्षण - (Personal Traits) व्यक्तिगत लक्षणों के वर्ग में आलपोर्ट ने उन लक्षणों को रखा है ; जो भिन्न-2 व्यक्तियों में भिन्न-2 होते हैं और भिन्न-2 मात्रा में होते हैं।

ऑलपोर्ट के अनुसार मनुष्य की समायोजन की क्रियाएँ इन्हीं लक्षणों से निर्देशित होती हैं। उन्होंने इन्हीं लक्षणों को व्यक्तित्व भिन्नता का आधार माना है। उनकी दृष्टि से व्यक्तित्व इन लक्षणों का योग या बंडल नहीं, इनका एक समाकलित रूप होता है।

ऑलपोर्ट ने व्यक्तिगत लक्षण (Personal Traits) को व्यक्तिगत प्रवृत्ति (Personal Dispositions) की संज्ञा दी है। उन्होंने इस प्रकार की लगभग 18,000 व्यक्तिगत प्रवृत्तियों के होने का दावा किया है। उनकी दृष्टि से इनमें से कुछ प्रवृत्तियाँ व्यक्तित्व की परिधि (Periphery) पर होती हैं ; जिन्हें स्पष्ट रूप से समझा-देखा जा सकता है और कुछ व्यक्तित्व के अन्दर अर्थात् केन्द्र (Centre) में होती हैं ; जिन्हें स्पष्ट रूप से देखना-समझना कठिन होता है।

ऑलपोर्ट ने व्यक्तिगत प्रवृत्तियों को तीन वर्गों में विभक्त किया है -

ⓐ प्रधान प्रवृत्तियाँ
ⓑ केन्द्रीय प्रवृत्तियाँ
ⓒ गौण प्रवृत्तियाँ

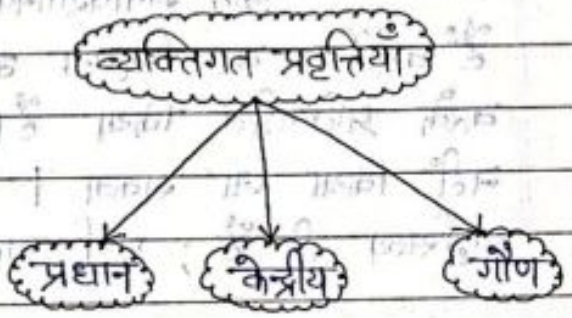

ⓐ प्रधान प्रवृत्तियाँ - (Cardinal Dispositions) इन प्रवृत्तियों को मनुष्य के व्यवहार में सरलता से देखा-समझा जा सकता है।

जैसे - अहिंसा, शांति, आक्रामकता।

ⓑ केन्द्रीय प्रवृत्तियाँ - (Central Dispositions) ये प्रवृत्तियाँ व्यक्ति के भीतर विद्यमान होती हैं और व्यक्ति के व्यक्तित्व को प्रभावित करती हैं और व्यक्ति के व्यक्तित्व की वास्तविक पहचान होती है।

जैसे- भावुक, सचेत, सामाजिक, ईमानदारी, दयालुता, सज्जनता

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

परोपकारिता, कामुकता, दब्बूपन, कामुकता आदि।

© गौण प्रवृत्तियाँ - (Secondary Dispositions) ये प्रवृत्तियाँ व्यक्ति के लिए कम महत्व की होती हैं और जिनकी दृढ़ता भी कम होती है। जैसे- हेयर स्टाइल, खास प्रकार के भोजन करना, विशेष मनोवृत्ति (Specific attitude) आदि।

आलपोर्ट का कहना है कि कोई प्रवृत्ति किसी एक व्यक्ति के लिए केन्द्रीय प्रवृत्ति हो सकती है और किसी दूसरे के लिए गौण प्रवृत्ति, यह व्यक्ति में उसकी दृढ़ता पर निर्भर करता है। इनका मानना है कि इन्हीं प्रवृत्तियों से मनुष्य का व्यवहार निर्देशित होता है। इनका मानना है कि यह अभिव्यक्त व्यवहार ही व्यक्तित्व का परिचायक होता है; इसी आधार पर किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व को समझा जा सकता है और किन्हीं दो व्यक्तियों के व्यक्तित्व में अन्तर किया जा सकता है।

कुछ मनोवैज्ञानिक ऑलपोर्ट के इस सिद्धान्त से सहमत नहीं हैं क्योंकि यह सिद्धान्त ऑलपोर्ट ने केवल 'स्वस्थ प्रौढ़ों' का अध्ययन करके प्रतिपादित किया है। अतः यह मनोविज्ञान व्यक्तियों पर लागू नहीं किया जा सकता। जिसके फलस्वरूप यह सिद्धान्त अपने में अर्द्धसत्य ही है; पूर्ण सत्य नहीं है।

Note - प्रोप्रियम (Proprium) - आलपोर्ट का मत है कि व्यक्तित्व असम्बन्धित शीलगुणों (Unrelated traits) का मात्र एक बंडल नहीं होता है बल्कि इसमें शीलगुणों की एक संगति, एकता एवं समन्वय पाया जाता है। इसका मतलब यह हुआ कि व्यक्तित्व में कुछ ऐसे नियम होते हैं जो शीलगुणों, मूल्यों, अभिप्रेरकों को संगठित करता है। इस नियम को ऑलपोर्ट ने 'प्रोप्रियम' कहा है। प्रोप्रियम एक लैटिन शब्द 'Proprius' से बना है जिसका अर्थ अपना (own) होता है। ऑलपोर्ट के लिए प्रोप्रियम 'आत्मन्' या अहम् के तुल्य है; परन्तु उन्होंने इन दोनों शब्दों का प्रयोग

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

नहीं किया है।

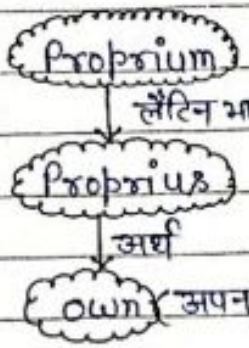

ऑलपोर्ट के अनुसार "प्रोप्रियम से तात्पर्य व्यक्तित्व के उन सभी पहलुओं से होता है ; जिससे उसमें आन्तरिक एकता तथा संगतता आती है।"

प्रोप्रियम मानव प्रकृति के धनात्मक, सृजनात्मक, वर्धन-उन्मुखी तथा गतिशीलता के गुणों को दर्शाता है। ऑलपोर्ट ने प्रोप्रियम के स्वरूप एवं विकास का वर्णन 7 अवस्थाओं के रूप में किया है -

① शारीरिक-आत्मन् ।
② आत्म-पहचान ।
③ आत्म-सम्मान ।
} (प्रथम 3 वर्ष में विकास)।

④ आत्म-विस्तार ।
⑤ आत्म-प्रतिमा ।
} (4-6 साल) ।

⑥ युक्तिसंगत समायोजन के रूप में आत्मन् । (6-12 वर्ष)।
⑦ उपयुक्त प्रयास । (किशोरावस्था)

• प्रथम 5 अवस्थाएँ (4 साल से 6 साल की आयु में विकसित होती हैं।) बच्चों में प्रथम तीन वर्ष की आयु में विकसित होती हैं।

• बाद की दो अवस्थाएँ 4-6 साल की आयु में विकसित होती हैं।

• युक्तिसंगत समायोजन की अवस्था का विकास 6-12 साल की आयु में होता है। तथा अन्तिम अवस्था का विकास किशोरावस्था में होता है।

→ इन सात अवस्थाओं से होकर ही प्रोप्रियम विकसित होता है। किशोरावस्था में आकर प्रोप्रियम का विकास पूर्ण हो जाता है।

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

Date 09/07/13
Page

व्यक्तित्व का मापन - (Assessment of Personality) मनुष्य के व्यक्तित्व के मापन का इतिहास बहुत पुराना है। प्राचीन काल में हमारे देश में मनुष्य के व्यक्तित्व से तात्पर्य उसके शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास के समग्र रूप से लिया जाता था। अतः तब इसका मापन भी इनके विकास के आधार पर किया जाता था।

→ आगे चलकर उसे उसकी सत्, रज् और तम् वृत्तियों के रूप में देखा-समझा जाने लगा और जिस व्यक्ति में जिस वृत्ति की अधिकता होती थी उसे उसी के अनुकूल सात्विक, राजसी अथवा तामसी व्यक्तित्व का कहा जाने लगा। वर्तमान में न तो हम व्यक्तित्व के स्वतन्त्र स्वरूप के विषय में एकमत हैं और न उसके मापन के विषय में एकमत हैं।

→ दूसरे देशों की कहानी हमारे देश से कुछ भिन्न है। प्राचीन-काल में वहाँ मनुष्य के व्यक्तित्व से तात्पर्य उसके बाह्य स्वरूप से लिया जाता था। वह जिस प्रकार का व्यवहार करता था उसे उसके व्यवहार के अनुकूल उसी वर्ग में रखा जाता था।

→ रोमन काल में वहाँ उसके व्यक्तित्व में उसके आन्तरिक स्वरूप को भी सम्मिलित किया जाने लगा और तब उसका मापन भी दोनों आधारों पर किया जाने लगा।

→ वर्तमान में मनुष्य के व्यक्तित्व के स्वरूप की व्याख्या और उसके मापन की विधियों का भी विकास पाश्चात्य मनोवैज्ञानिकों ने किया है। उन्होंने व्यक्तित्व मापन की अनेक विधियों का विकास भी किया है।

→ हमारे देश के मनोवैज्ञानिक उनका अन्धानुकरण भी कर रहे हैं। इस बीच व्यक्तित्व मापन की जिन विधियों का विधियों का विकास हुआ है; उन्हें मूलतः दो वर्गों में विभाजित किया जाता है-

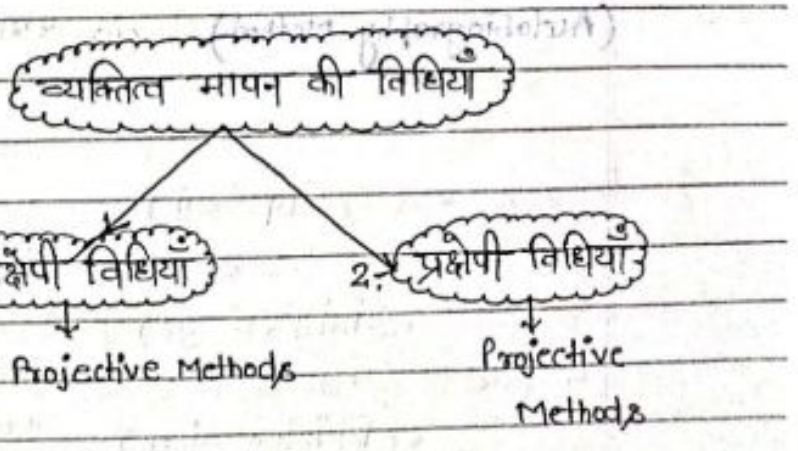

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

व्यक्तित्व मापन की विधियाँ
Methods of Personality Assessment

अप्रक्षेपी विधियाँ
Non-Projective Methods

व्यक्तिनिष्ठ विधियाँ
(Subjective Methods)

1. अवलोकन विधि (observation Method)
2. साक्षात्कार विधि (Interview Method)
3. प्रश्नावली विधि (Questionnaire Method)
4. व्यक्ति इतिहास विधि (Class History Method)
5. आत्मकथा विधि (Autobiography Method)

वस्तुनिष्ठ विधियाँ
(objective Methods)

1. नियंत्रित निरीक्षण विधि (Controlled observation Method)
2. श्रेणी मापनी (Rating Scale)
3. शारीरिक परीक्षण (Physiological Test)
4. परिस्थिति परीक्षण (Situation Test)
   (i) मनोनाटक (Psycho Drama)
   (ii) समाजमिति (Sociometry)

प्रक्षेपी विधियाँ
Projective-Methods

1. साहचर्य प्रविधि (Association Technique)
2. रचना प्रविधि (Construction Technique)
3. पूर्ति प्रविधि (Completion Technique)
4. चयन प्रविधि (Selection Technique)
5. अभिव्यक्ति परीक्षण (Expression Tests)

- (हरमैन रोर्शा) 1921 → रोर्शा स्याही धब्बा परीक्षण (Rorschach Ink-Blot Test)
- (मौर्गन एवं मुर्रे) 1935 → प्रासंगिक अन्तर्बोध परीक्षण (Thematic Apperception Test) TAT
- (लियोपोल्ड बेल्क) 1948 → बाल अन्तर्बोध परीक्षण (Children Apperception Test) CAT

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner